SOBAGHYA

LAKSHAMI

॥ श्रीः ॥

सौभाग्यलक्ष्मीः ।

नानाविधपुराणसमुद्धृता ।

मुरादाबादनिवासिकात्यायनगोत्रोद्भव-
पण्डितकन्हैयालालमिश्रविरचितया

भाषाटीकया समेता ।

क्षेमराज-श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष--"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस

बम्बई.

संवत् १९८८. शके १८५३.

मुद्रक और प्रकाशक-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
मालिक-"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, बम्बई.

श्रीः ।

अथ सौभाग्यलक्ष्म्यनुक्रमणिका ।

इति ।

॥ श्रीः ॥

दो शब्द ।

योः धर्म्मशीलो विजितेन्द्रियश्च
विद्याविनीतो न परो[illegible]
अगर्वितो यश्च [illegible]
त[illegible] वसामि ॥

जो मनुष्य धर्मपरायण, जितेन्द्रिय, अर्थात् इन्द्रियोंको [illegible]वाला, विद्यावान्, विनयसम्पन्न, अहंकार र[illegible] और [illegible] मनुष्य सब प्राणियोंके प्रति अनुराग दिखाता [illegible] मनुष्य दूसरे मनुष्योंके हृदयमें किसी प्रकारका [illegible] नहीं पहुँचाता, हे सुखानन्द भगवन्! मैं सदैव उस[illegible] साथ वास करती हूँ।

केवल मात्र इस एक श्लोकसे इस ग्रंथका म[illegible] प्रगट होजाता है। इसमें अत्यन्त सरल और [illegible] यह बताया गया है कि, किस पुरुष, किस पदार्थ और किस स्थानमें लक्ष्मीका निवास रहता है, किन लक्षणोंसे [illegible]

और पुरुष,पुरुषार्थ द्वारा लक्ष्मीको प्राप्त कर सकते हैं तथा किन दुर्लक्षणोंसे और दुरुपयोगोंसे लक्ष्मीका विनाश होता है। इस ग्रंथमें यह भी बताया गया है कि किस कोटिके मनुष्योंके संसर्ग और किन व्यक्तियोंकी कुसंगता तथा दुर्वासनाओंसे लक्ष्मीका प्राप्त होना असम्भव होता है और प्राप्त की हुई लक्ष्मी भी कुपित होकर चली जाती है।

अन्तमें लक्ष्मीदेवीका स्वरूप,उसके प्रसन्न करनेकी विधि, स्तोत्र और कवच, माहात्म्य और पूजापर अनेक प्रकारसे प्रकाश डाला गया है और तत्संबधी मंत्रोंको संगृहीत किया गया है तथा परमापिता जगदीश्वर सच्चिदानन्द–स्वरूप, ज्योतिरूप पुरुषका वर्णन और श्रीकृष्णकी सुन्दर स्तुतिके सहित पुस्तक समाप्त की गई है।

यह कहना अत्युक्ति न होगा कि इस ग्रथके पाठ और मनन तथा ध्यानसे लक्ष्मीप्राप्तिमें विशेष सहायता मिलती है, और प्रत्येक पुरुषार्थशील व्यक्तिका यह धर्म है कि वह लक्ष्मीको संचित करनेके लिये, उसको यथासंभव स्थायी बनानेके लिये तथा संसारमें यश और कीर्ति पैदा करनेके लिये इस ग्रंथका अवश्य अवलोकन और अध्ययन करे।

जो व्यक्ति इसके द्वारा साधना करेंगे उनको अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होगी।

मंत्रशास्त्रोक्त क्रियाके बलसे ही पूर्वकालीन ब्राह्मण ऋषियोंने अद्भुत शक्ति दिखाकर सर्वोपरि प्रधानता प्राप्त की थी।

मंत्रविद्याके प्रभावसे ही लंकाधिपति रावणने श्रीराम-चन्द्रजी और शेषावतार लक्ष्मणजीको भी विस्मित कर दिया था। वही स्तोत्र, कवच, मंत्रविद्या आजभी सुलभ है किंतु कलियुगीजीव जिस प्रकार सिद्धि करना चाहते हैं वैसे यह विद्या सिद्धि प्रदान नहीं कर सकती। मंत्र निर्वीर्य नहीं हैं, आजभी यदि पूर्ण विधिसे अनुष्ठान किया जाय तो अवश्यही सिद्धि प्राप्त होगी।

अनेक ग्रंथोंके टीकाकार व रचयिता तथा हिन्दी साहित्यके सुप्र[illegible] [illegible]र अपूर्व सुलेखक मुरादाबाद निवासी पूज्य पितृव्य पं० कन्हैयालालजी मिश्रने इसकी सुमनोहर तथा सरस टीका कर सोनेमें सुगंधवाली कहावत पूर्णतया चरितार्थ की है।

साधारण हिन्दी जानने वाले मनुष्य भी बड़ी सुगमताके साथ इससे लाभ उठा सकते हैं।

इसके अध्ययन करनेसे पाठक भलीभाँति समझ सकेंगे कि इसग्रंथका विषय कितना महत्त्वपूर्ण है और भारतकी वर्तमान जटिल स्थितिमें इसकी [illegible] आवश्यकता है।

इस संस्करणको सर्व प्रकारसे सर्वांग सुन्दर बना तथा संशोधनकर आप महानुभावोंके समक्ष उपस्थित किया है। यदि कहीं नर धर्मानुसार कोई त्रुटि आदि रह गई हो तो पाठक महाशय उसको सुधार कर पढने और सूचित करनेकी कृपा करें। आगामी संस्करणमें उसको ठीक कर दिया जायगा।

कृपापात्र–

बम्बई.
२४। १२। ३१
मार्गशिर शु. पूर्णिमा

जगदीशप्रसाद मिश्र
दीनदारपुरा-
मुरादाबाद।

श्रीः ।

अथ सौभाग्यलक्ष्मी ।

भाषाटीकासहित ।

श्लोक

शुक उवाच ।

मेरुपृष्ठे सुखासीनां लक्ष्मीं पप्रच्छ केशवः ।
केनोपायेन देवि त्वं नृणां भवसि निश्चला ॥ १ ॥

शुकदेवजीने कहा कि, किसी समय वैकुण्ठनाथ हरि सुमेरु पर्वतके ऊपर लक्ष्मीसहित विराजमान थे। उन्होंने कथाके प्रसंगमें लक्ष्मीसे पूछा, हे देवि! किसप्रकारके [illegible] अनुष्ठान करनेसे तुम मनुष्योंके घरमें अ[illegible] रहती हो? उसके जाननेकी मैं अभिलाषा [illegible] ॥ १ ॥

लक्ष्मीरुवाच ।

शुक्लाः पारावता यत्र गेहिनी यत्र चोज्ज्वला।
अकलहा स्थिता यत्र तत्र कृष्ण वसाम्यहम् २

लक्ष्मी बोली कि, हे कृष्ण ! जिस घरमें सफेद वर्णका पारावत अर्थात् कबूतर विराजमान रहता है जिस घरकी स्त्री परम रूपवती हो और जिस गृहमें कलह (क्लेश) विद्यमान नहीं रहता है, मैं तहां निरंतर वास करती हूं ॥ २ ॥

धान्यं सुवर्णसदृशं तंडुलं रजतोपमम् ।
अन्नश्चैवातुषं यत्र तत्र कृष्ण वसाम्यहम् ॥३॥

जिस गृहके गृहस्थी धान्यको कंचनकी समान और चावलोंको चांदीके समान देखते हैं और जिस घरमें अन्नके बीच तुषका लेशमात्र भी नहीं रहता है, हे कृष्ण ! मैं उस गृहमें सदा वास करती हूं ॥ ३ ॥

यः सद्विभागी प्रियवाक्यभाषी वृद्धोपसेवी प्रियदर्शनश्च । अल्पप्रलापी न च दीर्घसूत्री तस्मिन्सदाहं पुरुषे वसामि ॥४॥

जो मनुष्य भोजनकी सामग्री निकट बैठे हुए मनुष्यको बांटकर आप भक्षण करता है, जो मनुष्य प्रियभाषी है, जो वृद्ध पुरुषोंकी सेवा करता है, जो मनुष्य मनोहर कान्तिपूर्ण है, जो प्रलाप (बकवाद) नहीं करता है, और जिस पुरुषको आलस्य व्याकुल नहीं कर सकता है, हे कृष्ण ! मैं सदा उस पुरुषमें अधिष्ठान करती हूं ॥ ४ ॥

यो धर्मशीलो विजितेन्द्रियश्च विद्याविनीतो न परोपतापी । अगर्वितो यश्च जनानुरागी तस्मिन्सदाहं पुरुषे वसामि ॥ ५ ॥

जो मनुष्य धर्मपरायण, जितेन्द्रिय अर्थात् इन्द्रियोंको जीतनेवाला, विद्यावान, विनयसंपन्न, अहंकार रहित और जो मनुष्य सब प्राणियोंके प्रति अनुराग दिखाता है और जो मनुष्य दूसरे मनुष्योंके हृदयमें किसी प्रकारका भी क्लेश नहीं पहुंचाता, हे पुरुषोत्तम ! मैं सदा उसी पुरुषके निकट वास करती हूं ५॥

चिरं स्नाति द्रुतं भुंक्ते पुष्पं प्राप्य न जिघ्रति । यो न पश्येत्स्त्रियं नग्नां नियतं स च मे प्रियः ६

जो मनुष्य बहुत समयतक गोता लगाकर स्नान करता है, भोजन करनेमें जिसका थोडा समय व्यतीत होता है, जो मनुष्य पुष्प प्राप्त होनेपर भी उसकी गंध ग्रहण नहीं करता है और नंगी स्त्रियोंपर जिसकी दृष्टि नहीं पड़ती है। हे कृष्ण ! उस मनुष्यको सदा हमारा परम प्रीतिपात्र जानो ॥ ६ ॥

त्यागः सत्यश्च शौचश्च त्रयमिति महा-
गुणा [illegible]पोति गुणानेताञ्छ्रद्धावान्स
च [illegible]

शौच, सत्य और दान यही तीन महागुण प्रसिद्ध हैं, जो मनुष्य इन सब गुणोंका आधार और श्रद्धासंपन्न है, हे वैकुण्ठनाथ ! वह मनुष्यभी मेरा परम प्रिय है ॥ ७ ॥

सर्वलक्षणमध्ये तु त्याग एव विशिष्यते ।
काले देशे च पात्रे च स च त्यागः प्रशस्यते ८

संपूर्ण लक्षणोंके मध्यमें दानही सर्वश्रेष्ठ कहागया है, परन्तु देश, काल और पात्रके भेदसे वही दान सर्वोत्तम और महाफलका देनेवाला होता है।

जो मनुष्य ऐसी दानशीलताका आधार है, वह मेरा परम प्रियपात्र है ॥ ८ ॥

नित्यमामलके लक्ष्मीर्नित्यं तिष्ठति गोमये।
नित्यं शंखे च पद्मे च नित्यं श्रीःशुक्लवाससि९

लक्ष्मी सदा आमलेके वृक्ष, गोबर, शंख, तथा कमल और सफेद वस्त्रोंमें विराजमान रहती है ॥ ९ ॥

वसामि पद्मोत्पलशंखमध्ये [illegible] चन्द्रे
च महेश्वरे च। नाराय[illegible]रायां
वसामि नित्योत्सवमन्दिरेषु ॥ १० ॥

हे नाथ! मैं सदा पद्म, लाल कमल, और शंखमें स्थित रहती हूं। चन्द्रमाके मण्डल और महादेवजीमें रहती हूं, नारायणके हृदयमें, खजानेमें और पृथ्वीतलके जिस जिस स्थानमें प्रतिदिन उत्सव होता है, उस २ मंदिरमें विराजमान रहती हूं ॥ १० ॥

यथोपदिष्टं गुरुभक्तियुक्ता पत्युर्वचो नाक्रमते
च नित्यम्। नित्यञ्च भुंक्ते पतिभुक्तशेषं
तस्याः शरीरे नियतं वसामि ॥ ११ ॥

जो स्त्री शास्त्रमें कहे विधानानुसार गुरु देवके प्रति भक्ति दिखलाती है, जो स्त्री प्राणान्त होनेपरभी पतिका वचन उल्लंघन नहीं करती, और जो स्वामीके आहारसे बचाहुआ भोजन करती है । हे देवदेव ! मैं उस स्त्रीके शरीरमें सदा वास करती हूं ॥ ११ ॥

तुष्टा च धीरा प्रियवादिनी च सौभाग्ययुक्ता च सुशोभना च । लावण्ययुक्ता प्रियदर्शना या पतिव्रता या च वसामि तासु ॥ १२ ॥

जो नारी सर्वदा प्रसन्नचित्त, धीरस्वभाववाली, प्रियवादिनी, सौभाग्यशालिनी, रूपवती, लावण्यसंपन्न, प्रियदर्शन और पतिपरायण है । हे कृष्ण ! मैं ऐसी नारियोंके शरीरमें वास करती हूं ॥ १२ ॥

श्यामा मृगाक्षी कृशमध्यभागा सुभ्रूः सुकेशी सुगतिः सुशीला । गम्भीरनाभिः समदन्तपंक्तिस्तस्याः शरीरे नियतं वसामि ॥ १३ ॥

जो स्त्री श्याम अंगवाली, जिसके नेत्रकमल

हरिणीके नेत्रके समान बडे हैं, जिसकी कमर पतली है, जिसकी दोनों भौंहें परमरमणीय हैं, जिसके केश अत्यन्त सुंदर हैं, जो नारी अच्छी गतिवाली और सुशीलहै, जिसकी नाभि गहरी और जिसके दांतोंकी पांक्ति बराबर गुथीहुई है, हे कृष्ण! मैं ऐसी स्त्रीके शरीरमें सदा वास करती हूं ॥ १३ ॥

या पापयुक्ता पिशुनस्वभावा स्वाधीनकान्तं परिभूतये च। अमर्षकामा कुचरित्रशीला तामङ्गनां प्रेतमुखीं त्यजामि ॥ १४ ॥

जो नारी पापकर्ममें निरत, कठोर स्वभाववाली, स्वाधीन (खुद मुखतार) और जो स्त्री अपने पतिको पराभव करनेकी अभिलाषासे क्रोध दिखलाती है और जो नारी खोटे चरित्रवाली है, हे कृष्ण! उसे प्रेतमुखी जानो। मैं उसको सर्वथा परित्याग करती हूं ॥ १४ ॥

पुष्पं पर्य्युषितं पूति शयनं बहुभिः सह।
भग्नासनं कुनारींश्च दूरतः परिवर्ज्जयेत् ॥ १५ ॥

बासी पुष्प, दुर्गन्धि, बहुत जनोंके साथ मिलकर

सोना, टूटाहुआ आसन, और कुलक्षण स्त्री, यह कई एक सर्वथा परित्याग करनी चाहिये। जो लोग हमारी कामना करें, वह यह कईएक बातें छोड़नेसे पूर्णमनोरथ होसकते हैं॥ १५ ॥

चिताङ्गारकमस्थीनि वह्निं भस्म द्विजञ्च गाम् ।
न पादेन स्पृशेत्पादं कार्पासास्थि तुषं गुरुम् १६

चिताका अंगारा, चिताकी अस्थि, अग्नि, भस्म, ब्राह्मण, गौ, कपासके बीज, तुष और गुरुको चरणसे स्पर्श न करे और अपने चरणकोभी अपने दूसरे चरणसे मर्दन नहीं करना चाहिये। जो पुरुष इसके विपरीत करताहै, मैं उसको परित्याग करती हूं॥१६॥

नखकेशोदकञ्चैव मैथुनं पर्व्वसन्ध्ययोः ।
वर्ज्जयेन्नग्नशायित्वमेकाकी मिष्टभोजनम् १७॥

हे कृष्ण ! जो मनुष्य लक्ष्मीकी कामना करे, वह नख (नाखून) और केश (बाल) पडा हुआ जलपान वा स्पर्श न करे चतुर्दशी इत्यादिक पर्वके दिन और सन्ध्या समयमें स्त्री प्रसंग परित्याग

करना उसे सर्वथा उचित है वह मनुष्य नंगा होकर न सोवे, और दूसरे मनुष्यको न देकर अकेले मीठी वस्तुका भोजन करनाभी उसको उचित नहीं है १७

शिरःसु पुष्पं चरणौ सुपूजितौ वरांगनामैथुनमल्पभोजनम्। अनग्नशायित्वमपर्व्वमैथुनं चिरं प्रनष्टं श्रियमानयन्ति षट् ॥ १८ ॥

जिस पुरुषका मस्तक पुष्पसे शोभायमान रहता है, जिसके दोनों चरण धोने आदिद्वारा सदा शुद्ध हैं जो मनुष्य रूपवती स्त्रीके सङ्ग रमण करता है, जो थोड़ा भोजन करता है, जो मनुष्य नंगा होकर शयन नहीं करता और पर्वके दिन मैथुनका त्याग करता है उसकी पूर्व नष्ट हुई लक्ष्मी फिर प्राप्त होजाती है ॥१८॥

सम्मार्ज्जनीरजो वातं निर्गुण्डीं लकुचं तथा। रात्रौ बिल्वञ्च शाकञ्च कपित्थं वर्जयेद्दधि १९

बुहारीकी धूरि और पवन शरीरमें न लगने दे, रात्रिमें शेफालिका (हारशृंगार) का फूल धारण करना और लिचकुच, बेल, शाक, कैथ और दधिका भोजन करना कर्त्तव्य नहीं है, जो मनुष्य इन सब

नियमोंका प्रतिपालन करता है, मैं सदा उसके निकट विराजमान रहती हूं ॥१९॥

स्वगात्रासनयोर्वाद्यमपूतं मूर्द्धपादयोः । उच्छिष्टस्पर्शनं मूर्ध्नि स्नानाभ्यंगश्च वर्जयेत् ॥ २० ॥

जो मनुष्य हमारी कृपालाभ होनेकी अभिलाषा करे, वह अपना गात्र अथवा अपने आसनको न बजावे, सदा मस्तक और चरणको शुद्ध रक्खे, मस्तकपर जूंठनका स्पर्श न करावे और स्नान करनेके उपरान्त तेल आदि मर्दन न करे ॥२०॥

शयनश्चान्धकारे च रात्रिवासो दिने तथा । म्लानाम्बरं कुवेषश्च वर्जयेच्छुष्कभोजनम् २१॥

हे कृष्ण ! जो मनुष्य लक्ष्मीलाभ होनेकी कामना करे, वह कभी अंधेरे घरमें शयन न करे, दिनमें रात्रिके वस्त्र न पहरे और उस पुरुषको मैले वस्त्र, कुवेष तथा सूखा भोजन करना भी वर्जित है ॥२१॥

परेणोद्वर्तितं वक्षः स्वयं माल्यापकर्षणम् ।

आलस्यमवसादञ्च न कुर्य्याल्लोष्ठमर्दनम् ॥२२॥

और किसीसे अपनी छातीको न मलवावे, स्वयं अपने कंठसे माला न उतारे, आलस्य और अवसाद (विवाद) का परित्याग करे और शरीरमें लोष्ट अर्थात् धूरि इत्यादिका मर्दन करनाभी कर्त्तव्य नहीं है ॥ २२ ॥

शुक्रवारे च यस्तैलं शिलापिष्टञ्च दर्शके।
स्वयं वामेन मूर्द्धानं पाणिना नैव संस्पृशेत्२३॥

जो मनुष्य शुक्रवार और अमावस्याके दिन गन्ध द्रव्य और तेल स्पर्श नहीं करता है। और अपने वाम हाथसे जो मस्तकका स्वयं स्पर्श नहीं करता है, उसी मनुष्यपर हमारी प्रीति है ॥२३॥

तारकां पुष्पवन्तौ च न पश्येदशुचिः पुमान्।
नेक्षेद्गुह्यं परस्त्रीणां नास्तं यान्तं दिवाकरम् २४॥

अपवित्र अवस्थामें तारे, चन्द और सूर्यका दर्शन न करे पराई स्त्रीके गुप्त स्थानका देखनाभी उचित नहीं और अस्त होते हुए सूर्यके प्रतिभी

दृष्टि न डाले हे कृष्ण! जो पुरुष इस प्रकारका नियम पालन करता है, उसपर प्रसन्न होती हूं॥ २४॥

कुर्य्यान्नान्यधनाकांक्षां परस्त्रीणां तथैव च।
परेषां प्रातिकूल्यञ्च उदितार्के प्रबोधकम् ॥२५॥
नखकण्टकरक्तैश्च मृत्तिकागारवारिभिः।
वृथा विलेखनं भूमौ न कुर्य्यान्मम कांक्षया२६

हे पुरुषोत्तम! जो मनुष्य मेरे लाभ करनेकी अभिलाषा करे, वह पराये धन और पराई स्त्रीमें लालच न करे, दूसरेके प्रातिकूल आचरण करना उसका कर्त्तव्य नहीं, वह मनुष्य सूर्यउदय होनेके पहलेही शय्यासे उठे और नख, कण्टक, रक्त, मट्टी, कोयला और जलद्वारा वृथा भूमिमें न लिखे॥ २५॥ २६॥

ग्रथितञ्च स्वयं माल्यं स्वयं घृष्टञ्च चन्दनम्।
नापितस्य गृहे क्षौरं शक्रादपिहरेच्छ्रियम्॥२७॥

जो मनुष्य स्वयं माला गूंथकर कंठमें पहरता है, जो स्वयं चंदन घिसकर गात्रमें लगाता है, जो स्वयं नाईके घर जाकर हजामत करवाता है, वह मनुष्य

इन्द्रकी समान हो, तो भी लक्ष्मी उसको परित्याग करती है ॥ २७ ॥

न निन्दा गणके विप्रे पादयोर्नर्त्तनं तथा।
प्रतिकूलं चरेत्स्त्रीणां भुक्त्वा च दन्तधावनम्२८

ज्योतिषी और ब्राह्मणकी निन्दा न करे, बैठेहुए अथवा शयन करते हुए दोनों चरणोंका नचाना कर्त्तव्य नहीं, स्त्रियोंके प्रति प्रतिकूल आचरण न करे और भोजनके उपरान्त दतौन करना भी अनुचित है। हे हरे ! यह सब नियम प्रतिपालन करनेसे मनुष्य हमारी कृपाका भाजन होसकता है॥ २८ ॥

अनृतं मांससूपं च नग्नाञ्चैव स्त्रियं तथा।
भक्षणाद्दर्शनाच्चैव शक्रादपि हरेच्छ्रियम् ॥२९॥

जो मनुष्य वृथा (अनिवेदित) मांस और वृथा अन्नभोजन करता है, और जो मनुष्य वस्त्ररहित स्त्रीपर दृष्टि डालता है, वह मनुष्य इन्द्रकी समान होनेपर भी हतश्री होजाता है ॥ २९ ॥

मन्त्रैरयुक्तः परदारसेवी आचारहीनः परसेव-

कश्च । संकीर्णचारी परिवादशीलस्तं निष्ठुरं दम्भमहं त्यजामि ॥ ३० ॥

जो मनुष्य अभीष्ट मन्त्र परित्याग करता है, पराई स्त्रीकी सेवा करता है, गुरुजनको छोड़ देता है जिनकी सेवा करनी योग्य नहीं इनकी सेवा करता है, जो मनुष्य नीचोंकी समान आचरण करनेवाला और कलंकग्रस्त है । हे कृष्ण ! मैं ऐसे निष्ठुर दंभी-को परित्याग करती हूं ॥ ३० ॥

शयनञ्चार्द्रपादेन रात्रिवासो दिने तथा ।
उत्तरीयमधः कुर्याच्छुष्कपादेन भोजनम् ३१

हे कृष्ण ! हमारी कृपाकी अभिलाषा करनेवाला मनुष्य गीले चरणोंसे शयन, दिनमें रात्रिके वस्त्रधा-रण, डुपट्टेकी धोती पहरना और विना धोये चर-णोंसे भोजन परित्याग करे ॥ ३१ ॥

अशुचिम्लानवस्त्रञ्च दुर्गन्धमसुखावहम् ।
अभूषणामपुष्पाञ्च न कुर्यादात्मनस्तनूम् ३२

अपवित्र और मैले वस्त्र परित्याग करे, अपना

शरीर दुर्गन्धियुक्त, दुःखयुक्त, और भूषणरहित न करे, और मस्तक पुष्पादिसे सुशोभित रक्खे ॥३२॥

कर्णे च वदने घ्राणे तथा करतलेऽपि च ।
पादे पृष्ठे तथा नेत्रे न कुर्य्यादनुलेपनम् ॥३३॥

कर्ण, वदन, नासिका, हथेली, चरणके नीचे पीठ और नेत्र इन सब स्थानोंमें गंधादि न लगावे ॥ ३३ ॥

चक्षुर्लग्ने हतं श्रेयो मुखलग्ने धनक्षयः ।
दारिद्र्यं कण्ठलग्ने च पादपृष्ठे वयःक्षयः ॥३४॥
करे च नासिकारन्ध्रे बुद्धिनाशोऽनुलेपनम् ।
तस्माद्विवर्जयेदेतानतुलेपनभाजिनः ॥ ३५ ॥

नेत्रमें लगानेसे श्रेष्ठताका विनाश, वदनमें लगानेसे धनका क्षय, कण्ठमें लगानेसे दरिद्र, चरण और पीठमें लगानेसे परमायुका विनाश, हाथ और नासिकाके छिद्रोंमें लगानेसे बुद्धिका विनाश होजाता है, इसलिये इन सब स्थानोंमें अनुलेपनप्रदान न करे ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

गन्धं पुष्पं तथा तोयं रत्नं चैव महोदधिम् ।

गृहीतं प्रथमं वस्त्रं वर्जयेन्न कदाचन ॥३६॥

गंध, पुष्प, जल, रत्न, महोदधि और वस्त्र यह सब वस्तु प्राप्त होनेपर इनका परित्याग करना उचित नहीं, परित्याग करनेसे इसी समय मैं क्रोधित होजाती हूं ॥ ३६ ॥

अजारजः खररजस्तथा सम्मार्जनीरजः ।
स्त्रीणां पादरजो राजञ्छक्रादपि हरेच्छ्रियम्॥३७॥

जिस मनुष्यके शरीरमें भेडके खुरोंकी धूरि गधेके चरणकी धूरि,बुहारीकी धूरि और स्त्रियोंके चरणोंकी धूरिका स्पर्श होजाता है, वह मनुष्य इन्द्रके समान होनेपर भी हतश्री होजाता है ॥ ३७ ॥

कुचैलिनं दन्तमलप्रधारिणं बह्वाशिनं निष्ठुरवाक्यभाषिणम् ॥ सूर्योदये चास्तमिते च शायिनं विमुञ्चति श्रीरपि चक्रपाणिनम् ॥३८॥

जो मनुष्य मैले वस्त्र धारण करता है, जो दांत नहीं मांजता है, कठोर वाक्यप्रयोग करता है, जो मनुष्य बहुत भोजन करता है, और जो मनुष्य सूर्योदय होनेके समय अथवा अस्त होनेके समय

शयन करताहै, वह मनुष्य भगवान्‌की समान हो, तो भी लक्ष्मी उसको परित्याग करती है ॥ ३८ ॥

नित्यं छेदस्तृणानां क्षितिनखलिखनं पादयो-
रल्पपूजा दन्तानामल्पशौचं वसनमलिनता
रूक्षता मूर्द्धजानाम् ॥ द्वे सन्ध्ये चापि निद्रा
विवसनशयनं ग्रासहासातिरेकः स्वांगे पीठे च
वाद्यं हरति धनपतेः केशवस्यापि लक्ष्मीम्॥ ३९॥

निरन्तर हाथसे तृणचीरना, नाखूनसे भूमिमें लिखना, चरणका अशुद्ध रखना, दांतोंको मैला रखना, वस्त्रोंको मैला रखना, बालोंको रूखा रखना, प्रातःकाल और संध्यासमय सोना, नग्न होकर सोना, भोजनके समय बडे ग्रासका ग्रहणकरना, जोरसे हँसना, अपने देह व आसनका बजाना, यह कईएक कार्य करनेसे क्या धनपति कुबेर, क्या केशव, उनकी लक्ष्मी भी नष्ट होजाती है ॥३९ ॥

एवं यः कुरुते नित्यं मयोक्तानि च केशव ।
तुष्टा भवामि तस्याहं त्वय्येव निश्चला यथा४०

हे केशव! मैंने जिसप्रकार विधान कीर्त्तन किया, जो मनुष्य प्रतिदिन इसीप्रकार कार्यका अनुष्ठान करता है, तो मैं तुममें जैसे निश्चल होकर स्थित हूं, इसीप्रकार उस मनुष्यमें भी अचल होकर वास करतीहूं और उससे निःसंदेह परम प्रसन्न रहतीहूं ४०॥

श्रीभाषितमिदं स्तोत्रं प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
तद्गृहं विपुलं रम्यं नित्यं भवति नान्यथा ४१॥

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर लक्ष्मीजीके कहेहुए इस स्तोत्रका पाठ करताहै, उसका गृह निरंतर विपुल ऐश्वर्यसमान्वित होकर परम शोभा धारण करताहै ॥ ४१ ॥

व्याधितो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
आपदस्तस्य नश्यन्ति तमः सूर्योदये यथा४२॥

इस स्तवके पाठ करनेसे रोगी रोगसे छूटजाताहै बंदीका बंधन छूटजाताहै और सूर्योदय होनेपर जिसप्रकार तिमिरराशिका नाश होजाताहै, वैसेही विपत्तियोंके समूह ध्वंस होजाते हैं ॥ ४२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे लक्ष्मीकेशवसंवादे पं०कन्हैया लालमिश्रकृत-
भाषाटीकासहिते लक्ष्मीचरित्रं समाप्तम् ।

इन्द्र उवाच।

नमामि सर्व्वभूतानां जननीं पद्मसम्भवाम् ।
श्रियं मुनीन्द्रपद्माक्षीं विष्णोर्वक्षःस्थल-
स्थिताम् ॥ १ ॥

देवराज इन्द्र सुरगुरु बृहस्पतिजीके शापसे विगतश्री हो स्तवद्वारा लक्ष्मीजीकी आराधना करके कहने लगे। जो संपूर्ण जीवगणोंकी माता, कमलदल जिसका उत्पत्तिस्थान, जिनके खिलेहुए नेत्र कमलपत्रके सदृश बडे हैं और जो भगवान विष्णुके हृदयमें निरंतर विराजमान रहती हैं। मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीको नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥

त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोक-
पालिनी । सन्ध्या रात्रिः प्रभा भूमिर्मेधा
श्रद्धा सरस्वती ॥ २ ॥

हे देवी ! तुम्हीं सिद्धि, तुम्हीं स्वधा, तुम्हीं स्वाहा, तुम्हीं सुधा, तुम्हीं सन्ध्या, तुम्हीं रात्रि, तुम्हीं प्रभा, तुम्हीं भूमि, तुम्हीं बुद्धि, तुम्हीं श्रद्धा,

तुम्हीं सरस्वती और तुम्हीं सबकी माता हो (तुम्हें नमस्कार करता हूँ) ॥ २ ॥

यज्ञविद्या महाविद्या गुह्यविद्या च शोभने ।
आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी ३॥

हे शोभने ! तुम्हीं यज्ञविद्या, तुम्हीं महाविद्या, तुम्हीं गुप्तविद्या, तुम्हीं ब्रह्मविद्या और तुम्हीं एकमात्र मुक्तिकी देनेवालीहो।(तुमको वारंवार प्रणाम है)॥३॥

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च ।
सौम्या सौम्यैर्जगद्रूपैस्त्वयेदं देवि पूरितम्॥ ४ ॥

हे देवि ! तुम्हीं तर्कविद्यारूपिणी, तुम्हीं साम-आदिचारों वेदोंका स्वरूप, तुम्हीं दण्डनीतिस्वरूपिणी और तुम्हीं सौम्यरूपिणी अर्थात् मनोहररूपवाली हो । हे जननी ! तुम्हारे अनेकरूपद्वाराही संपूर्ण विश्व परिपूरित हो रहा है ॥ ४ ॥

का त्वन्या त्वामृते देवि सर्व्वयज्ञमयं वपुः ।
अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्त्यं गदाभृतः ५॥

देवदेव गदाधर हरिको देह सर्वयज्ञमय है, जो एकमात्र योगीगणोंको चिन्तनीय है, हे देवि ! तुम्हारे अतिरिक्त कौन स्त्री उस देहमें वास कर सकती है ॥ ५ ॥

त्वया देवी परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् ।
विनष्टप्रायमभवत्त्वयेदानीं समेधितम् ॥ ६ ॥

हे देवि ! तुम पहले इस विश्वको परित्याग करके समुद्रके भीतर प्रवेश करगईथी, तब त्रिभुवन विनाशके लगभग होगया था, परन्तु तुमने फिर क्षीरसागरसे निकलकर इसकी रक्षा की है ॥ ६ ॥

दाराः पुत्रास्तथागारं सुहृद्धान्यद्धनादिकम् ।
भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ७॥

हे महाभागे ! तुम्हारी कृपादृष्टि होने पर मनुष्य क्या स्त्री, क्या पुत्र, क्या गृह, क्या बंधु, क्या धान्य, क्या धन सबही प्राप्त कर सकते हैं। (इस कारण हमारे ऊपर प्रसन्न होकर कृपा दृष्टि करो) ॥ ७ ॥

शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् ।
देवि त्वदृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम् ॥८॥

हे जननी ! तुम जिस मनुष्यपर कृपादृष्टि करती हो उसको क्या आरोग्यता, क्या ऐश्वर्य, क्या शत्रु-नाश, क्या सुख, कुछ भी दुर्लभ नहीं है ॥ ८ ॥

त्वमंबा सर्व्वभूतानां देवदेवो हरिः पिता ।
त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम्॥९॥

हे माता ! तुम संपूर्ण जीवोंकी माता और देवदेव हरि सबके पिता हैं, तुमसे और विष्णुसे यह चराचर जगत् व्याप्त हो रहा है ॥ ९ ॥

मानं कोषं तथा कोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम् ।
मा शरीरं कलत्रञ्च त्यजेथाः सर्व्वपावनि ॥१०॥
मापुत्रान्मासुहृद्वर्गान्मा पशून्माविभूषणम् ।
त्यजेथा देवदेवस्य विष्णोर्व्वक्षःस्थलाशये ११॥

हे हरिहृदयवासिनी ! तुम जिस मनुष्यका त्याग करती हो, उस मनुष्यका क्या सुख, क्या कोष, क्या पोशाक, क्या शरीर, क्या स्त्री, क्या पुत्र, क्या सुहृत् (मित्र), क्या पशु, क्या आभूषण सबही नष्ट होजाते हैं ॥ १० ॥ ११ ॥

सत्येनाशौचसत्त्वाभ्यां तथा शीलादिभि-
र्गुणैः । त्यज्यन्ते तेनराः सद्यः सन्त्यक्ता
ये त्वयामले ॥ १२ ॥

हे विमले ! तुम जिसको त्याग करती हो, उसका सत्य, पवित्रता, बल, शील, आदि सबही दूर हो जाते हैं ॥ १२ ॥

त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैरखिलै-
र्गुणैः । कुलैश्वर्य्यैश्च युज्यन्ते पुरुषा
निर्गुणा अपि ॥ १३ ॥

हे देवि ! तुम जिस पुरुषको कृपाकी दृष्टिसे देखती हो उसके गुणविहीन होनेपर भी शीघ्रही शीलादि गुण और ऐश्वर्य प्राप्त हो जाते हैं ॥ १३ ॥

स श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स
बुद्धिमान् । स शूरः स च विक्रान्तो
यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥ १४ ॥

हे देवि ! तुम जिसपर कृपादृष्टि करती हो, वही श्लाघायोग्य, वही गुणी, वही धन्य, वही कुलीन,

वही बुद्धिमान्, वही शूर और वही विक्रमशाली गिना जाता है ॥ १४ ॥

सद्यो वैगुण्यमायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः । पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे १५॥

हे विष्णुप्रिये ! तुम जगत्की माता हो, तुम जिससे विमुख होती हो, उसके शीलादि जितने गुण हैं, शीघ्र नाशको प्राप्त हो जाते हैं ॥ १५ ॥

न ते वर्णयितुं शक्ता गुणाञ्जिह्वा हि वेधसः । प्रसीद देवि पद्माक्षि मास्मां-स्त्याक्षीः कदाचन ॥ १६ ॥

हे कमललोचने ! ब्रह्माकी जिह्वाभी तुम्हारे गुण कीर्त्तन करनेको समर्थ नहीं है। हे जननी ! हमसे प्रसन्न होओ, हमें त्याग मत करो ॥ १६ ॥

पराशर उवाच।

एवं श्रीः संस्तुता सम्यक्प्राह हृष्टा शत-क्रतुम् । शृण्वतां देवदेवानां प्रादुर्भूता स्थिता द्विज ॥ १७ ॥

पराशरजीने कहा कि हे ब्राह्मण ! जब इन्द्रने सब देवताओंके सामने इस प्रकार स्तुति करी, तब सब प्राणियोंमें स्थित कमला (लक्ष्मी) ने प्रसन्न होकर कहा ॥ १७ ॥

श्रीरुवाच।

परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन हेतुना।
वरं वृणीष्व यस्त्विष्टो वरदाहं समागता ॥ १८॥

लक्ष्मी बोली कि हे देवेश ! मैं तुम्हारे स्तवसे सन्तुष्ट हो वर देनेके लिये आई हूं, तुम अपना अभिलषित वर मांगो ॥ १८ ॥

वरदा यदि देवि त्वं वरार्हो यदि वाप्यहम्। त्रैलोक्यं न त्वया त्याज्यमेष मे ह्यर्थितो वरः ॥ १९ ॥

इन्द्रने कहा कि हे देवि ! यदि हमारे ऊपर प्रसन्न हुई हो यदि हमें वर देनेके योग्य पात्र विचारा है, तो त्रिभुवनको परित्याग करके मत जावो । हे जननी ! हमारा केवल यही प्रार्थनीय वर है ॥ १९ ॥

स्तोत्रेण यस्तवैतेन त्वां स्तोष्येत्पद्मसम्भवे । स त्वया न परित्याज्यो द्वितीयस्तु वरो मम ॥ २० ॥

हे सागरसम्भवे ! जो मनुष्य इस स्तवद्वारा तुम्हारी प्रीति साधन करे, तुम उनको त्याग मत करो । हे जननी ! यही हमारा प्रार्थनीय दूसरा वर है ॥ २० ॥

लक्ष्मीरुवाच ।

त्रैलोक्यं त्रिदशश्रेष्ठ सन्त्यजामि न वासव ।
दत्तो वरो मया त्वां तु स्तोत्रेण परितुष्टया॥२१॥

लक्ष्मी बोली कि हे त्रिदशनाथ! मैं तुम्हारे स्तवसे परितुष्ट-(संतुष्ट) होकर वर देती हूं मैं त्रिभुवनका त्याग नहीं करूंगी ॥ २१ ॥

यश्च सायं तथा प्रातः स्तोत्रेणानेन मानवः । मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि पराङ्मुखी ॥ २२ ॥

जो मनुष्य प्रातःकाल और संध्यासमय इस स्तवका पाठ करके हमारी प्रीतिसाधन करेगा, मैं कभी उससे विमुख नहीं हूंगी ॥ २२ ॥

पराशर उवाच ।

एवं वरं ददौ देवी देवराजाय वै पुरा । मैत्रेय
श्रीर्महाभागा स्तोत्राराधनतोषिता ॥२३॥

पाराशरजी बोले कि हे मैत्रेय ! पूर्वकालमें महाभागा देवी लक्ष्मीने इसप्रकार स्तवद्वारा आराधना करनेसे संतुष्ट होकर देवराज इन्द्रको वर दियाथा२३॥

भृगोर्वंशे समुत्पन्ना श्रीः पूर्व्वमुदधेः पुनः ।
देवदानवयत्नेन प्रसूतामृतमन्थने ॥ २४ ॥

देवी लक्ष्मीजीने पूर्वकालमें भृगुकुलमें जन्म ग्रहण किया था फिर किसी कारणसे वह देह त्याग करदी अनन्तर देवराज इन्द्रकी आराधनासे संतुष्ट होकर फिर देव असुरोंकरके सागर मथनेके समय समुद्रके भीतरसे उत्पन्न हुई ॥ २४ ॥

एवं यदा जगत्स्वामी देवदेवो जनार्दन ।
अवतारं करोत्येव तथा श्रीस्तत्सहायिनी॥२५॥

जगत्पति देवदेव जनार्दन (भगवान) जिसजिस समय अवतार लेते हैं, लक्ष्मीदेवीभी उसी उसीसमय देह धारण करके पतिकी सहायिनी होती है ॥ २५ ॥

पुनश्च पद्मादुद्भूता यदादित्योऽभवद्धरिः ।
यदा च भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्वियम्॥२६॥

जिस समय विष्णुने आदित्यावतार लिया, तब लक्ष्मी कमलसे उत्पन्न हुई, और जब हरि भृगुवंशमें परशुरामरूपसे अवतरे, तिस समय लक्ष्मीदेवीने भी-पृथ्वीका रूप धारण किया ॥ २६ ॥

राघवत्वेऽभवत्सीता रुक्मिणी कृष्णजन्मनि ।
अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषा सहायिनी ॥२७॥

रामावतारमें लक्ष्मीजी सीतारूपसे कृष्णावतारमें रुक्मिणीरूपसे और अन्य अवतारोंमें अन्य अन्य रूप धारण करके पतिकी सहायिनी हुई ॥ २७ ॥

देवत्वे देवदेहेयं मानवत्वे च मानवी ।
विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषात्मनस्तनुम्॥२८॥

विष्णु जिससमय देव देह धारण करते हैं, लक्ष्मी

भी तिस समय देव देहधारण करती है. और जिससमय विष्णु मनुष्यदेह धारण करते हैं, लक्ष्मी भी तिससमय मनुष्यरूपसे सहायिनी होती हैं । इस प्रकार देवी लक्ष्मी विष्णुके देहकी अनुपम अनुगामी होती हैं ॥ २८ ॥

यश्चैतच्छृणुयाज्जन्म लक्ष्म्याः स्तोत्रं पठेन्नरः ।
श्रियो न विच्युतिस्तस्य गृहे यावत्कुलत्रयम् २९

जो मनुष्य लक्ष्मीजीके जन्मका वृत्तान्त श्रवण और इस देवीस्तोत्रका पाठ करता है उसके वंशमें तीन पीढियोंतक लक्ष्मी विराजमान रहती है ॥ २९ ॥

पठ्यते येषु गेहेषु सुभक्त्या श्रीस्तवो मुने ।
अलक्ष्मीः कलहो बाधा नतेष्वास्ते कदाचन ३०॥

जिन सब गृहोंमें भक्तिपूर्वक इस स्तवका पाठ होता रहता है, उन गृहोंमें कभी अलक्ष्मी, क्लेश, बाधा कुछभी विद्यमान नहीं रहती है ॥ ३० ॥

एतत्ते कथितं ब्रह्मन्यस्मात्त्वं परिपृच्छसि ।
क्षीराब्धौ श्रीर्यथा जाता पूर्वं भृगुसुता सती ३१॥

हे ब्रह्मन् ! भृगुनंदिनी सती लक्ष्मीजीने जिसकारण क्षीरसागरसे फिर जन्म ग्रहण किया तुम्हारे पूछनेके अनुसार वह संपूर्ण आदिसे अन्ततक कथन किया ॥ ३१ ॥

इति सकलविभूत्यवाप्तिहेतु-
स्तुतिरियमिन्द्रमुखोद्गता हि लक्ष्म्याः ॥
अनुदिनमनुपठ्यते नृभिर्यै-
र्वसति न तेषु कदाचिदप्यलक्ष्मीः ॥३२॥

जो मनुष्य प्रतिदिन संपूर्ण विभूति प्राप्त होनेके कारण इन्द्रके मुखसे कहाहुआ यह लक्ष्मीस्तोत्र पाठ करता है उसके गृहमें कभी अलक्ष्मी नहीं रहती॥३२॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पराशरमैत्रेयसंवादे पं० कन्हैयालालमिश्रकृत-
भाषाटीकासहिते लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम् ।

अथ श्रीसूक्तम्।

त्वं श्रीरुपेन्द्रसदने मदनैकमाता
ज्योत्स्नासि चन्द्रमसि चन्द्रमनोहरास्ये॥
सूर्य्ये प्रभासितजगत्त्रितये प्रभासि
लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां शरण्ये॥ १॥

हे लक्ष्मी ! तुम उपेन्द्रके गृहमें श्रीस्वरूपिणि हो। हे मदनजननि ! तुम चन्द्रमंडलमें चांदनीस्वरूप हो, हे विधुवदने ! तुम सूर्यमंडलमें प्रभास्वरूप और त्रिभुवनमें भी प्रभास्वरूपिणी हो, हे शरण्ये ! जो लोग तुमको सदा प्रणाम करते हैं, उनसे प्रसन्न होओ॥ १॥

त्वं जातवेदसि सदा दहनात्मशक्ति-
र्वेधास्त्वया जगदिदं विविधं विदध्यात्।
विश्वम्भरोऽपि बिभृयादखिलं भवत्या
लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां शरण्ये॥ २॥

हे भगवती ! तुम अग्निमें जलानेवाली शक्तिस्वरू-

पिणी हो, तुम्हारी सहायताके बलसेही ब्रह्मा संसारकी होनहार बातोंको लिखता है, और स्वयं विश्वम्भरभी तुम्हारी ही सहायताके बलसे इस जगत्की रक्षाका विधान करते हैं। हे देवि ! जो लोग सदा तुम्हारे चरणोंमें प्रणाम करते हैं, उनसे प्रसन्न होओ ॥ २ ॥

हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम् ।
चन्द्रां हिरण्मयींलक्ष्मींजातवेदो ममावह॥३॥

हे अग्ने ! जिनका वर्ण सुवर्णकी समान उज्ज्वल है जो हरिणीकी समान रूपवाली हैं, जिनके कंठमें सुवर्ण और चांदीके फूलोंकी माला शोभा पाती है जो चन्द्रमाकी समान प्रकाशमान हैं, जिनकी माला देह सुवर्णमय है, उन्हीं लक्ष्मीदेवीका हमारे निमित्त आवाहन कर । हे हुताशन ! तुम्हीं देवताओंके होता हो बस लक्ष्मीदेवीको आवाहन करके बुलानेमें केवल तुम्हारीही सामर्थ्य है ॥ ३ ॥

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् ।
यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥४॥

हे अग्ने ! जिनके प्रसन्न होकर आनेसे क्या सुवर्ण क्या भूमि, क्या अश्व (घोडा), क्या पुत्रपौत्रादि सर्वही प्राप्त होजाता है, उन्हीं अनुगामिनी (उन्हींके पीछे जानेवाली) लक्ष्मी देवीको हमारे लिये आवाहन कर ॥ ४ ॥

अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम् ।
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम्॥ ५ ॥

घोडे जिसके आगे चलते हैं, संपूर्ण रथ जिसके मध्यमें स्थित हैं, जो हाथियोंकी चिंघाड़से सबको जगाती रहती है, जो एक मात्र देवी और आश्रय है उन्हीं लक्ष्मीको समीप आवाहन करता हूं वह आनकर हमारी सेवाको माने ॥ ५ ॥

कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्॥पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥ ६ ॥

जिनका शरीर कमलकी समान कुछेक हँसता हुआ विराजित है, जिनका वर्ण सुवर्णकी समान उज्ज्वल है,जो क्षीरसागरके निकलनेसे सदा गीली है,जिनकी

सदा उज्ज्वलकांति है, सदा परितृप्त और जो प्रसन्न हो मनोरथ दे आश्रितभक्त जनोंको तृप्त करती है. जो कमलके आसनपर विराजमान और कमलके समान वर्णवाली है, मैं उन्हीं श्रीलक्ष्मीदेवीको समीपमें आवाहन करता हूं ॥ ६ ॥

चन्द्रां प्रभासां यशसा ज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्॥तां पद्मिनीमीं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्म्मे नश्यतां त्वां वृणोमि ॥७॥

जो चंद्रमाकी समान प्रभायुक्त है, जो परम दीप्तिमान है, जो यशके समूहसे प्रकाशमान है, सुरपुरमें सदा देवता लोग जिसकी आराधना करते हैं, जो उदाराचित्तवाली है, जो कमलके समान रूपवाली और ईकारस्वरूपिणी है, मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीकी शरण होता हूं । हे देवि ! मैं तुमको प्रणाम करके प्रार्थना करता हूं तुम हमारी अलक्ष्मीको दूर करो ॥ ७ ॥

आदित्यवर्णे तपसोधि जातो वनस्पतिस्तववृक्षोथ बिल्वः ॥ तस्य फलानि तपसा नुदन्तु मायाऽन्तरायाश्च बाह्या अलक्ष्मीः ॥ ८ ॥

हे देवि ! तुम्हारा वर्ण सूर्यकी समान उज्ज्वल है तुम्हारी तपस्याके प्रभावसेही फलवान् बिल्ववृक्षादि उत्पन्न होते हैं;हे शरण्ये! उन्हीं बिल्ववृक्षोंके पके हुए फलसमूह हमारे अंतस्थ और बाहरकी अलक्ष्मीको दूर करें ॥ ८ ॥

उपैतु मां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह।
प्रादुर्भूतः सुराष्ट्रेस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातु मे॥९॥

हे देवि ! तुम्हारे अनुग्रहसे शिवका मित्र कुबेर और कीर्ति देवी मणिरत्नादिसहित हमारे निकट उपस्थित हों,मैंने इस संसारराज्यमें देह धारण किया है, वह आनकर हमें कीर्ति और ऋद्धि प्रदान करें ॥९॥

क्षुत्पिपासामला ज्येष्ठाअलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्।
अभूतिमसमृद्धिञ्च सर्व्वां निर्णुद मे गृहात् १०

मैं क्षुधा और तृष्णासे मलपरिपूर्ण अलक्ष्मीका विनाश करूँगा । हे देवि ! तुम हमारे गृहसे संपूर्ण अभूतिको और असमृद्धिको दूर करो ॥ १० ॥

गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्व्वभूतानां त्वामिहोपह्वये श्रियम् ११॥

गंधही जिसका लक्षण है, जिसको कोई भी परास्त करनेमें समर्थ नहीं है, जो सदा गौ इत्यादि पशुओंसे युक्त है,जो संपूर्ण जीवोंकी ईश्वरी है, मैं उन्हीं लक्ष्मीदेवीको समीपमें आवाहन करता हूं ॥ ११ ॥

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि ।
पशूनां रूपमन्नस्य मयि श्रीः श्रयतां यशः१२

हे देवि ! तुम प्रसन्न होकर आशीर्वाद दो, तुम्हारे प्रसादसे हमारा मनोरथ पूर्ण होवे, संकल्प सिद्ध होवे, सदा सत्यवचन बोलनेमें बुद्धि रहे, मुझे गायका दूध बहुत सारा प्राप्त हो, चारों ओर हमारे गृहमें आवश्यकतानुसार अन्न विद्यमान रहे और समृद्धि व यश सदा मेरा आश्रय करे ॥ १२ ॥

कर्दमेन प्रजाभूता मयि सम्भ्रम कर्दम ।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् १३॥

कर्दमजीसेही संपूर्ण प्रजा उत्पन्न हुई है । इसकारण हे कर्दम ! तुम हमारे स्थानमें स्थिति करो और अपनी जननी पद्ममालिनी लक्ष्मी देवीको हमारे वंशमें स्थापित करो ॥ १३ ॥

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।
निजदेवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥१४॥

हे कर्दम ! जलदेवतागण चिकना द्रव्य उत्पन्न करै तुम सदा मेरे स्थानमें स्थित रहो और अपनी जननी लक्ष्मीदेवीको हमारे वंशमें स्थापित करो ॥ १४ ॥

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिंपिंगलांपद्ममालिनीम्।
चन्द्रां हिरणमयीं लक्ष्मींजातवेदोमआवह १५॥

हे अग्ने ! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथमें शोभायमान यष्टि (लकडी) विराजमान है, जो पुष्टियुक्त है, जो पीलेवर्णवाली है, जो पद्मचारिणी, पद्ममालिनी और जिनका वर्ण सुवर्णकी समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मीदेवीको हमारे लिये समीपमें आवाहन कर ॥ १५ ॥

आर्द्रां यः करिणीं यष्टिं सुवर्णां हेममालिनीम्
सूर्यां हिरणमयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह१६॥

हे अनल ! जो गीले देहवाली है, जिनके हाथमें शोभायमान यष्टि विराजमान है, जो सुवर्णकी समान

वर्णवाली और हेमामालिनी है, जिनकी कान्ति सूर्य के समान देदीप्यमान है, उन्हीं लक्ष्मी देवीको हमारे निमित्त निकट आवाहन कर ॥ १६ ॥

तां म आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गावो दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् ॥ १७ ॥

हे अग्ने ! जिनके अनुग्रहसे बहुतसा सुवर्ण, गौ, अश्व, दास, दासी, पुत्र, पौत्र इत्यादि प्राप्त करसकें, तुम उन्हीं अनपगामिनी लक्ष्मी देवीको हमारे निमित्त निकट आवाहन करो ॥ १७ ॥

लक्ष्मीचरित्रम् ।

कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नविमण्डिते ।
नानावृक्षलताकीर्णे विहंगगणशोभिते ॥ १ ॥
नानाकुसुमगुल्मैश्च वेष्टिते च गणावृते ।
देवदानवगन्धर्व्वकिन्नरैरुपशोभिते ॥ २ ॥
मन्दमारुतसंवीते पार्व्वतीपरमेश्वरौ ।

समासीनौ कथां चक्राते तौ नित्यमुदान्वितौ।
भक्त्या देवं प्रणम्याथ पार्व्वती परिपृच्छति३॥

जो स्थान विविध रत्नोंके समूहोंसे विभूषित है अनेक प्रकारके वृक्ष और लता जिसको चारों ओरसे घेरे रहते हैं, कलनादि विहंग गण सदा कूजन करके अपूर्व श्री सम्पादन करते हैं, अनेक प्रकारके पुष्प और गुल्मादिसे जो स्थान शोभित है, जिस स्थानमें देव, दानव, गंधर्व, किन्नर और प्रमथगण सदा वास करते हैं, जिस स्थानमें पवन मंद मंद चलकर अधिष्ठाताओंके आनंदको बढाता है, किसीसमय इसी रमणीय कैलास पर्वतके शिखरपर पार्वती और परमेश्वर (: महादेव) जो प्रमुदित चित्तसे रत्न-सिंहासन पर विराजमान हुए अनेक प्रकारके कथासंगसे समय व्यतीत करते थे। प्रसंगके क्रमसेही गौरीने भक्तिपूर्वक पतिके चरणोंमें प्रणाम करके पूछा ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

श्रीपार्व्वत्युवाच ।

देवदेव महेशान सर्वागमविशारद ।

त्वमेव शरणं देव लोकानां दुःखनाशनः ॥४॥

श्रीपार्वतीजी बोलीं कि हे देवदेव ! तुम संपूर्ण शास्त्रके पारदर्शी हो, तुम्हीं सबके आश्रय और तुम्हारे ही अनुग्रहसे प्राणी दुःखरूपी समुद्रसे छुटकारा पाते हैं ॥ ४ ॥

कमलायाश्च माहात्म्यं ब्रूहि मे प्रमथाधिप।
केनोपायेन देवी तु गृहे भवति सुस्थिरा ॥ ५॥

हे प्रमथाधिप ! लक्ष्मीदेवीका माहात्म्य हमसे वर्णन करो कि किस प्रकारके कार्यका अनुष्ठान करनेसे कमला मनुष्योंके घरमें अचल होकर वास करती है ? मैं उसके श्रवण करनेकी अभिलाषा करती हूं ॥ ५ ॥

श्रीशिव उवाच।

साधुसाधु महाभागे यत्त्वया परिपृच्छ्यते।
सारात्सारतरं लोके गुह्याद्गुह्यतरं महत् ॥६॥
सर्व्वपापहरं पुण्यं सर्व्वदेवनमस्कृतम्।

सर्व्वमन्त्रमयं साक्षात्सर्व्वयज्ञफलप्रदम् ॥७॥
चिन्तनीयं प्रयत्नेन पठनीयं प्रयत्नतः ।
विना जपेन होमेन विना ध्यानेन तापसा ॥
फलञ्चलभते मर्त्त्यो लक्ष्मीमाहात्म्यकीर्त्तनात् ८

श्रीमहादेवजी बोले कि हे महाभागे!हे कल्याणि! तुम्हारा प्रश्न सुननेसे संतुष्ट हो शत शत धन्यवाद देता हूं तुमने जो विषय पूछा है, वह सारसे भी सारतर और गुह्य होनेपरभी गुह्यतर जानना चाहिये। लक्ष्मीमाहात्म्यके सुननेसे संपूर्ण पाप ध्वंस होजाता है, यह परम पवित्र और सर्वदेववंदनीय है। यह सर्व मंत्रमय है और इससे सब यज्ञोंका फल मिलता है, यत्नसहित इसका पाठ करना और ध्यान करना सर्वथा उचित है । इस लक्ष्मीमाहात्म्यका कीर्त्तन करनेसे अथवा इसका मर्म जानलेनेसे जिस प्रकार महाफल प्राप्त होता है, वैसे फलकी संभावना क्या जप, क्या होम, क्या ध्यान, क्या तपस्या, किसीसे भी नहीं है ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

प्राणस्वरूपमेतत्तु न कस्मैचित्प्रकाशितम् ।
तव स्नेहान्महादेवि कथयामि समासतः॥ ९॥

हे देवि ! यह लक्ष्मीतत्त्व हमारा प्राणस्वरूप जानना चाहिये, यह किसीके निकट प्रकाश करने योग्य नहीं है, केवल तुम्हारे प्रति प्रीतिके वश होकर कहता हूं ॥ ९ ॥

श्रीशिव उवाच ।

तप्तकाञ्चनवर्णाङ्गीं रामां राजीवलोचनाम् ।
नानालंकारभूषाढ्यां रामस्य वामतःस्थिताम्॥
चिन्तामणिगृहे रत्नसिंहासनस्थितां सतीम् ।
एवं संचिन्तयेद्यस्तु स भवेत्कमलाप्रियः॥ ११॥

श्रीमहादेवजी बोले कि हे देवी ! जिसका वर्ण तपे हुए सुवर्णकी समान है, जिनकी कान्ति मनोहर है, जिसके नेत्र कमलदलकी समान बडे हैं, जो अनेक प्रकारके अलंकारोंसे भूषित हैं, जो चिन्तामणिके गृहमें रघुनाथजीके बाँईओर रत्नसिंहासनपर स्थित रहती है, जो मनुष्य इन्हीं पतिपरायण लक्ष्मी

जीका ध्यान करता है, वह निःसंदेह कमलाका प्रियपात्र होता है ॥ १० ॥ ११ ॥

सदाचाररता यत्र आस्तिका मानवास्तथा।
न विरोधो गृहे यत्र तत्र लक्ष्मीर्वसेद्ध्रुवम्॥१२॥

हे देवि! जिस घरके गृहस्थीलोग निरंतर सदाचार करते हैं। नास्तिकता जिन लोगोंके शरीरमें आश्रय नहीं पाती और विरोधका जिस गृहमें लेशमात्रभी नहीं है, लक्ष्मी सर्वदा तहां वास करती है ॥ १२ ॥

योऽधर्मञ्च परित्यज्य धर्म्मञ्चापि निषेवते।
कमला निश्चला तस्मिन्सत्यंसत्यं हिपार्व्वति १३

हे पार्व्वती! जो मनुष्य अधर्मको परित्याग करके धर्मानुष्ठानमें प्रवृत्त होता है, मैं सत्य सत्य कहता हूं, उसके गृहमें लक्ष्मी निश्चल होकर वास करती है १३

अतिथेः सेवको यश्च दानयज्ञतपोरतः।
कमला निश्चला तस्य सत्यंसत्यं वदामि ते १४॥

हे पार्वती! जो मनुष्य दान करनेवाला, यज्ञ करने-

वाला और तपस्यामें लगा हुआ है, और जो मनुष्य भक्तिपूर्वक अतिथिकी सेवा करता है मैं सत्य सत्य कहता हूं, उसी पुरुषमें लक्ष्मी निश्चला होकर वास करती हैं ॥ १४ ॥

पतिपरायणा यत्र यत्र नारी सुरूपिणी ।
गेहिनी धर्म्मिणी यत्र तत्र लक्ष्मीर्विराजते॥१५॥

जिस गृहकी स्त्री पतिपरायणा है, जिस गृहकी स्त्री परमरूपवती है, जिस गृहकी स्त्री परम धर्मशीला है, लक्ष्मी उसी गृहमें निरन्तर विराजमान रहती है ॥ १५ ॥

केशसंस्करणञ्चैव आदर्शे मुखदर्शनम् ।
देवानाञ्च पितृणाञ्च तर्पणं दन्तधावनम्॥१६॥
दिवसस्याग्रभागे तु न कुर्य्याद्यो हि मानवः ।
तं दृष्ट्वा कमलाक्षित्तं दूरतः परिवर्ज्जयेत्॥१७॥

जो मनुष्य बालोंका संभालना, शीशेमें मुख देखना, देवता और पितृगणोंका तर्पण करना, दतौन करना, इन कई एक कार्य्योंको दिनके पहले

भागमें समाप्त न करके अनवसरमें करता है, उस निन्दितको देखतेही लक्ष्मी चंचल होती है, और उसको छोड़कर चली जाती है ॥ १६ ॥ १७ ॥

ग्रामे तीर्थे तथा क्षेत्रे तथान्यपथि मध्यतः ।
मलमूत्रपरित्यागी अलक्ष्म्याः स प्रियः सुतः १८

क्या ग्राम, क्या, तीर्थ, क्या क्षेत्र, अथवा और जो कोई स्थान हो, जो मनुष्य मार्गमें मल, मूत्र करता है, लक्ष्मी उसको परित्याग करती है, उसको अलक्ष्मीका प्रियपुत्र जानो ॥ १८ ॥

मलं मूत्रं तथा केशं कपालं भस्म चैव हि ।
न पादेन स्पृशेद्यो हि लक्ष्मीं समभिकांक्षति १९

जो मनुष्य लक्ष्मीलाभ होनेकी कामना करे, वह कभी मल, मूत्र, केश, अस्थि, भस्म इत्यादिके ऊपर खड़ा न होवे ॥ १९ ॥

नग्नो भूत्वा न च स्नाति न च शेते उलङ्गकः ।
लक्ष्मीर्विराजते तस्मिन्सत्यंसत्यं हिशङ्करि २०

हे शंकरि ! जो मनुष्य नंगा होकर स्नान नहीं करता है, और जो नंगा होकर नहीं सोता है, मैं

सत्य कहता हूं कि लक्ष्मी उस पुरुषमें निरंतर विराजमान रहती है ॥ २० ॥

दशाहीनं तथा च्छिन्नं वस्त्रं मलिनदूषितम् ।
घृणया त्यज्यते येन स भवेत्कमलाप्रियः२१॥

जो मनुष्य दशाहीन, छिन्न और मैले वस्त्र घृणापूर्वक त्याग करता है, वह निःसंदेह लक्ष्मीका प्रियपात्र होता है ॥ २१ ॥

इति श्रीरुद्रयामले शिवगौरीसंवादे कन्हैयालालमिश्रकृतभाषाटीकासहितकमलाप्रीतिसाधनं नाम लक्ष्मीचरित्रं समाप्तम् ॥

श्रीशंकर उवाच।

अथातः संप्रवक्ष्यामि लक्ष्मीस्तोत्रमनुत्तमम् ।
पठनाच्छ्रवणाद्यस्य वरो मोक्षमवाप्नुयात् ॥१॥
गुह्याद्गुह्यतरं पुण्यं सर्व्वदेवनमस्कृतम् ।
सर्व्वमंत्रमयं साक्षाच्छृणु पर्व्वतनन्दिनि ॥२॥

श्रीमहादेवजी बोले कि, हे पार्वती! अनन्तर अत्युत्तम लक्ष्मीस्तोत्रका वर्णन करता हूं, तुम श्रवण

करो। इसको श्रवण करनेसे अथवा पढ़नेसे मनुष्यगण मुक्तिलाभ करते हैं यह गुप्तसेभी गुप्ततर है, सर्वदेववंदनीय और सर्वमंत्रमय जानना चाहिये १॥२

अनन्तरूपिणीं लक्ष्मीमपारगुणसागरीम् ।
अणिमादिसिद्धिदात्रीं शिरसा प्रणमाम्यहम्३॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम अनन्तरूपिणी हो, तुम गुणोंकी सागरस्वरूप हो, तुम प्रसन्न होकर अणिमादिक सिद्धियें देती हो, तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करता हूं ॥ ३ ॥

आपदुद्धारिणी त्वं हि आद्या शक्तिः शुभा परा।
आद्या आनंददात्री च शिरसा प्रणमाम्यहम्४॥

हे देवि ! तुम प्रसन्न होकर प्रणत जनको विपदसे उद्धार करती हो. तुम्हीं कल्याणी व आद्यापराशक्ति-हो तुम्हीं सबसे आदि और तुम्हीं आनंदकी देनेवाली हो, तुम्हें मस्तक झुकाकर प्रणाम करताहूं॥४॥

इन्दुमुखी इष्टदात्री इष्टमन्त्रस्वरूपिणी ।
इच्छामयी जगन्मातः शिरसा प्रणमाम्यहम्५॥

हे देवि जगन्मातः लक्ष्मी ! तुम्हीं मनवांछित अभिलाषाको देती हो, तुम्हारा शरीर पूर्ण चन्द्रमाकी समान प्रकाशित है, तुम इष्टमंत्रस्वरूपिणी और इच्छामयी हो, तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करता हूं॥५॥

उमा उमापतेस्त्वन्त उत्कण्ठाकुलनाशिनी ।
उर्वीश्वरि जगन्मातर्लक्ष्मि देवि नमोस्तु ते॥६॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम्हीं उमापतिकी उमाहो, तुम्हीं उत्कंठित मनुष्यकी उत्कण्ठाका नाश करती हो, तुमहीं पृथ्वीकी ईश्वरी हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ६ ॥

ऐरावतपतेः पूज्या ऐश्वर्य्याणां प्रदायिनी ।
औदार्य्यगुणसम्पन्ना लक्ष्मि देवि नमोस्तुते७॥

हे देवि ! तुम ऐरावतपर सवार होनेवाले देवराज इन्द्रसे पूजित हो, तुम प्रसन्न होकर संपूर्ण ऐश्वर्य दे सकती हो, तुम उदार गुणसे विभूषित हो. तुम्हें नमस्कार है ॥ ७ ॥

कृष्णवक्षःस्थिता देवि कलिकल्मषनाशिनी ।
कृष्णचित्तहरा कर्त्रि शिरसा प्रणमाम्यहम्॥८॥

हे कमले ! तुम सदा श्रीकृष्णके वक्षःस्थलमें स्थित रहती हो, तुम्हारे सिवाय और कोईभी कालिकल्मष (पाप) नाश करनेको समर्थ नहीं है, तुमने श्रीकृष्णका चित्त चुरा लिया है. अतएव तुम्हीं सर्वकर्त्री अर्थात् सब कुछ करनेवाली हो, तुम्हें मस्तक नवाय कर प्रणाम करता हूं ॥ ८ ॥

कन्दर्पदमना देवि कल्याणी कमलानना ।
करुणार्णवसम्पूर्णा शिरसा प्रणमाम्यहम् ॥९॥

हे देवि ! तुमनेही कामदेवका गर्व हरण किया था तुम कल्याणमयीहो. तुम्हारा मुखारविन्द कमलकी समान मनोहर है. केवल तुम्हीं करुणाकी सागरस्वरूपा हो, मैं तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करताहूं ९

खञ्जनाक्षी खगनासा देवि खेदविनाशिनी ।
खञ्जरीटगतिश्चैव शिरसा प्रणमाम्यहम्॥१०॥

हे देवि ! तुम खंजन (ममोले) की समान नेत्रवाली हो, तुम्हारी नासिका गरुडजीकी नासिकाके समान मनोहर है, तुम आश्रित जनोंका खेद विनाश

करती हो, तुम्हारी गति खंजरीटके समान धीरे चलनेवाली है, मैं मस्तक नवायकर प्रणाम करताहूं॥१०॥

गोविन्दवल्लभा देवि गन्धर्व्वकुलपावनी।
गोलोकवासिनीमातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ११

हे जननि ! तुम वैकुण्ठनाथ गोविन्दकी प्यारी हो तुम्हारे अनुग्रहसेही गन्धर्वकुल पवित्र हुआ है, तुम सदा गोलोकमें विहार करती हो, मैं मस्तक नवाय कर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ११ ॥

ज्ञानदा गुणदा देवि गुणाध्यक्षा गुणाकरी।
गन्धपुष्पधरा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् १२

हे देवि! हे मातः! केवल तुम्हीं ज्ञानकी देनेवाली और केवल तुम्हीं गुणकी देनेवाली हो, तुम्हीं गुणोंकी अध्यक्ष और तुम्हीं गुणोंका आधार हो, तुम गंध पुष्पसे सदा शोभित रहती हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ १२ ॥

घनश्यामप्रिया देवि घोरसंसारतारिणी।
घोरपापहरा चैव शिरसा प्रणमाम्यहम्॥१३॥

हे कमले! तुम घनश्याम हरिकी प्रिया हो केवल तुम्ही घोर संसारसागरसे उद्धार करसकती हो, तुम्हारे सिवाय और कोई भयंकर पापसे उद्धार करनेको समर्थ नहीं है। इसलिये मैं तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करताहूं ॥ १३ ॥

चतुर्वेदमयी चिन्त्या चित्तचैतन्यदायिनी ।
चतुराननपूज्या च शिरसा प्रणमाम्यहम् १४॥

हे लक्ष्मी! तुम चतुर्वेदमयी हो, केवल तुम्हीं योगीजनोंको चिन्तनीय हो, तुम्हारे प्रसादसेही चित्तमें चैतन्यताका संचार होता है, जगत्पति ब्रह्माजीभी तुम्हारी पूजा करते हैं। इसलिये हे जननि! मैं तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करता हूं॥ १४ ॥

चैतन्यरूपिणी देवि चन्द्रकोटिसमप्रभा ।
चन्द्रार्कनखरज्योतिर्लक्ष्मीदेवि नमाम्यहम् १५॥

हे देवि! तुम चैतन्यरूपिणी हो, तुम्हारे देहकी कान्ति करोड चन्द्रमाके समान मनोहरहै,तुम्हारे हाथ पैरोंके उंगलियोंकी दीप्ति चन्द्रसूर्यकी प्रभासेभी

अधिक देदीप्यमान है, मैं तुमको नमस्कार करता हूँ ॥ १५ ॥

चपला चतुराध्यक्षा चरमे गतिदायिनी ।
चराचरेश्वरी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् १६॥

हे लक्ष्मीदेवी ! तुम सदा एक स्थानमें स्थित नहीं रहती हो, इसलिये तुम चपला नामसे युक्त हुई हो अन्तकालमें केवल तुमही गतिकी देनेवाली और तुमही संपूर्ण जीवोंकी अधीश्वरी हो. हे देवि ! मैं तुमको मस्तक नवायकर प्रणाम करता हूं ॥ १६ ॥

छत्रचामरयुक्ता च छलचातुर्य्यनाशिनी ।
छिद्रौघहारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् १७

हे जननि ! तुम शोभायमान छत्र और चमरसे अत्यन्त शोभा पाती हो, छल चातुर्य्य (चतुराई) सबही तुम्हारे प्रभावसे नाशको प्राप्त होजाती हैं, तुम पापसमूहोंको ध्वंस करती हो इसलिये मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ १७ ॥

जगन्माता जगत्कर्त्री जगदाधाररूपिणी ।
जयप्रदा जानकी च शिरसा प्रणमाम्यहम् १८

हे जननि ! तुम जगत्की माता हो, केवल तुम्हीं जगत्की आधार हो, जय देनेवाली और तुम्हीं जानकीरूपसे पृथ्वीपर अवतीर्ण हुई हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ १८ ॥

जानकीशप्रिया त्वं हि जानकोत्सवदायिनी ।
जीवात्मनी च त्वं मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् १९

हे जननि ! तुम्हीं जानकीपति रामचन्द्रकी स्त्रीहो तुम्हीं राजा जनकको आनंद देनेवाली हो और तुम्हीं संपूर्णजीवोंकी आत्मास्वरूप हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ १९ ॥

झिञ्झीरवस्वना देवि झञ्झावातनिवारिणी ।
झर्झरप्रियवाद्या च शिरसा प्रणमाम्यहम् २० ॥

हे देवि ! तुम्हारे कंठका स्वर झंझापवनके समान मधुर है, तुम्हारे अनुग्रह करके झंजा वायुके हाथसे सरलतापूर्वक उद्धार पाया जा सकता है, तुम्हीं गोवर्द्धनादि पर्वतोंमें झर्झर बाजे जो बजते हैं, उनमें अनुराग करती हो, मैं शिर झुकाकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥ २० ॥

टङ्ककदायिनी त्वं हि त्वञ्च ठक्काररूपिणी ।
ढक्कादिवाद्यप्रणया डम्फवाद्यविनोदिनी ।
डमरुप्रणया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् २१॥

हे जननि ! केवल तुम्हीं अर्थ देती हो, तुम्हीं ठकाररूपिणी (चन्द्रमण्डलस्वरूपिणी) हो, डमरू और डफ बजनेसे तुम्हारी अत्यन्त प्रीति संचार होती है, और पखवाजादि बाजोंसेभी तुम प्रसन्न होती हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हारे चरणकमलमें प्रणाम करता हूं ॥ २१ ॥

तप्तकाञ्चनवर्णाभा त्रैलोक्यलोकतारिणी ।
त्रिलोकजननी लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् २२

हे देवि तुम्हारा वर्ण तपे हुए सुवर्णके समान उज्ज्वल है, तुम त्रिलोकीके जनोंका उद्धार करती हो, और तुम्हीं त्रिलोककी माता हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ २२ ॥

त्रैलोक्यसुंदरी त्वं हि तापत्रयनिवारिणी ।
त्रिगुणधारिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् २३

हे जननि ! तुम त्रिभुवनमें परमरूपवती हो तुम्हीं तीनों तापोंका नाश करती हो, तुम्हीं सत्त्व, रज और तमोगुणको धारण करनेवाली हो, मैं तुम्हें मस्तक नवायकर प्रणाम करता हूँ ॥ २३ ॥

त्रैलोक्यमङ्गला त्वं हि तीर्थमूलपदद्वया ।
त्रिकालज्ञा त्राणकर्त्री शिरसा प्रणमाम्यहम्२४

हे देवि ! तुम त्रिभुवनका मंगल विधान करती हो तुम्हारे चरणयुगलमें ही संपूर्ण तीर्थ विराजमान रहते हैं, तुम, भूत, भविष्य और वर्तमान तीनों कालसे ज्ञातहो तुम्हीं जीवोंकी रक्षाकरनेवाली हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ २४ ॥

दुर्गतिनाशिनी त्वं हि दारिद्र्यापद्विनाशिनी ।
द्वारकावासिनी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम्२५

हे मातः ! तुम आपत्तिमें फसे जनोंकी दुर्गतिको और दरिद्रीमनुष्यके दरिद्रको दूरकरती हो, तुम द्वारका पुरीमें अवस्थिति (ठहर) कर विराजमान रहती हो, मैं मस्तक नवायकर तुमको प्रणाम करता हूं ॥ २५ ॥

देवतानां दुराराध्या दुःखशोकविनाशिनी ।
दिव्याभरणभूषांगी शिरसा प्रणमाम्यहम् २६

हे देवि ! देवतालोगभी बहुत आराधना करके बहुत कष्टसे तुमको प्राप्त हुए हैं, तुम प्रसन्न होकर शोक दुःख सबहीका नाश करती हो, तुम दिव्य भूषणोंसे परम शोभायमान हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं॥ २६ ॥

दामोदरप्रियां त्वं हि दिव्ययोगप्रदर्शिनी ।
दयामयी दयाध्यक्षी शिरसा प्रणमाम्यहम् २७

हे जननि ! तुम दामोदरकी प्रिया हो, तुम्हारे प्रसादसे ही दिव्ययोग प्राप्त किया जाता है, तुम दयामयी और दयाकी अध्यक्षी हो मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ २७ ॥

ध्यानातीता धराध्यक्षी धनधान्यप्रदायिनी ।
धर्मदा धैर्य्यदा मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् २८

हे मातः !तुम ध्यानसे परे हो, तुम पृथ्वीकी अध्यक्षी हो, तुम्हीं भक्तजनको धन धान्य इत्यादि

देती हो, तुम धर्म और धैर्यकी देनेवाली हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ २८ ॥

नवगोरोचना गौरी नन्दनन्दनगेहिनी ।
नवयौवनचार्व्वंगी शिरसा प्रणमाम्यहम् २९॥

तुम नये गोरोचनकी समान गौरवर्णवाली हो, तुम नंदनंदन व्रजेश्वरकी प्यारी स्त्री हो, तुम यौवनके होनेसे अत्यन्त कान्तिमती हो,मैं तुम्हें मस्तक नवाय-कर प्रणाम करता हूं ॥ २९ ॥

नानारत्नादिभूषाढ्या नानारत्नप्रदायिनी ।
नितम्बिनी नलिनाक्षीलक्ष्मीदेवि नमोस्तुते३०

हे लक्ष्मी ! तुम अनेक रत्नादि भूषणोंसे विभूषित होकर परम शोभा पाती हो तुम प्रसन्न होकर विविध रत्न देती हो, तुम बडे नितम्बोंवाली हो और तुम्हारे नेत्र कमलदलकी समान बडे हैं,मैं तुम्हें मस्तक नवायकर नमस्कार करता हूं ॥ ३० ॥

निधुवनप्रेमानन्दा निराश्रयगतिप्रदा ।
निर्विकारा नित्यरूपा लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते३१

हे देवि लक्ष्मी ! तुम विकाररहित और नित्यरूपिणी हो, निधुवनमें विहार करनेसे तुमको परमानंदका संचार होता है, तुम निराश्रय जनको गतिकी देनेवाली हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ३१ ॥

पूर्णानन्दमयी त्वं हि पूर्णब्रह्मसनातनी ।
पराशक्तिः पराभक्तिर्लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ३२

हे लक्ष्मी देवि ! तुम पूर्णानन्दमयी और तुम्हीं पूर्णब्रह्मरूपिणी हो, तुम्हीं परमशक्ति और तुम्हीं परमभक्तिकी रूप हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ३२ ॥

पूर्णचन्द्रमुखी त्वं हि परानन्दप्रदायिनी ।
परमार्थप्रदा लक्ष्मि शिरसा प्रणमाम्यहम् ३३॥

हे लक्ष्मी ! तुम्हारा मुखारविन्द पूर्ण चंद्रमाकी समान शोभायमान है, तुम परम आनन्द और परमार्थकी देनेवाली हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ३३ ॥

पुण्डरीकाक्षिणी त्वं हि पुण्डरीकाक्षगेहिनी ।
पद्मरागधरा त्वं हि शिरसा प्रणमाम्यहम् ३४

हे जननि ! तुम्हारे नेत्र कमलके दलकी समान बडे हैं, तुम पुण्डरीकाक्ष (कमलदलकी समान नेत्र-वाले) हरिकी मोहिनी हो, पद्मरागमणिको धारण करके परम शोभाको प्राप्त होती है, मस्तक नवाय-कर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ३४ ॥

पद्मा पद्मासना त्वं हि पद्ममालाविधारिणी ।
प्रणवरूपिणी मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ३५॥

हे माता ! तुम कमलासनपर विराजमान रहतीहो, इसलिये ही तुम्हारा पद्मा नाम हुआ है, तुम्हारे गलेमें अति मनोहर कमलकी माला पडी रहती हो, तुम्हीं ओंकाररूपिणी हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ३५ ॥

फुल्लेन्दुवदना त्वं हि फणिवेणीविमोहिनी ।
फणिशायिप्रिया मातः शिरसा प्रणमाम्यहम् ३६

हे जननि ! तुम्हारा मुखारविन्द उदय हुए चन्द्र-माकी किरणोंके समान निर्मल है. तुम्हारे शिरकी वेणी सर्पके समान विस्तारित होकर अत्यन्त शोभा धारण करती है, तुम क्षीरसागरमें फणिशय्यापर

शयन करनेवाले देवदेव हरिकी स्त्री हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ३६ ॥

विश्वकर्त्री विश्वभर्त्री विश्वत्रात्री विश्वेश्वरी ।
विश्वाराध्या विश्वबाह्या लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम्हीं विश्वकी करनेवाली, तुम्हीं विश्वका पालन करनेवाली,तुम्हीं विश्वकी रक्षा करनेवाली और तुम्हीं संपूर्णजीवोंकी ईश्वरी हो । तुम विश्वमें वास करनेवाले जीवोंके द्वारा आराधना करने योग्य हो, तुम विश्वमें सर्व्वत्रही देदीप्यमान रहती हो,परन्तु तुम उसमें लिप्त नहीं हो तुम विश्वके बाहर स्थित हो तुम्हें नमस्कार है ॥ ३७ ॥

विष्णुप्रिया विष्णुशक्तिर्बीजमन्त्रस्वरूपिणी ।
वरदा वाक्यसिद्धा च शिरसा प्रणमाम्यहम् ३८॥

हे देवि ! तुम विष्णुकी प्रिया और विष्णुकी एकही शक्ति हो, तुम बीजमंत्रस्वरूपिणी, तुम्हीं वरदेनेवाली और वक्यासिद्धिसम्पन्न हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ३८ ॥

वेणुवादप्रिया त्वं हि वंशीवाद्यविनोदिनी ।
विद्युद्गौरी महादेवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ३९

हे महादेवि ! हे लक्ष्मी देवि ! तुम बिजलीके समान गौरवर्णवाली, वेणु और वंशी बजनेसे तुम्हारी प्रीतिका संचार होता है, तुम्हें नमस्कार है ॥ ३९ ॥

भक्तिमुक्तिप्रदा त्वं हि भक्तानुग्रहकारिणी ।
भवार्णवत्राणकर्त्री लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ४०॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम्हीं भक्ति और मुक्तिकी देनेवाली हो, तुम्हीं भक्तजनके ऊपर अनुग्रह करनेवाली हो, और तुम्हीं आश्रित जनको भवसागरसे उद्धार करती हो, तुझे नमस्कार है ॥ ४० ॥

भक्तप्रिया भागीरथी भक्तमंगलदायिनी ।
भयदा भयदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ४१

हे जननी ! तुम भक्तजनके प्रति आन्तरिक स्नेह प्रकाश करती हो, तुम्हीं भागीरथी (गंगा) स्वरूपिणी हो और भक्तजनका कल्याण करनेवाली हो,

तुह्मीं दुष्ट मनुष्यगणोंको भय दिखलाती हो, औ शरणागतको अभय देती हो, तुह्में नमस्कार है॥४१।

मनोभीष्टप्रदा त्वं हि महामोहविनाशिनी ।
मोक्षदा मानदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते४२

तुम मनोरथ पूरण करती और महामोहका विनाश करती हो, तुम्हीं मोक्ष और सन्मानकी देनेवाली हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४२ ॥

महाधन्या महामान्या माधवमनोमोहिनी ।
मुखरा प्राणहन्त्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते४३

हे लक्ष्मीदेवि तुम्हीं केवल धन्या और केवल माननीय हो, क्या धन्यवाद, क्या सन्मान कोई भी और तुमसे श्रेष्ठ नहीं है, तुमने माधवका मन मोहन किया है, जो संपूर्ण स्त्रियें बहुत बोलनेवाली हैं तुम उनका प्राणसंहार करती हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४३ ॥

यौवनपूर्णसौन्दर्य्या योगमाया योगेश्वरी ।
युग्मश्रीफलवक्षाश्च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ४४

हे देवि ! तुमने पूर्णयौवन संयुक्त होनेके कारण परमकान्ति धारण करी है तुम्हीं मूर्त्तिमान् योगमाया और तुम्हीं योगेश्वरी हो, तुम्हारे वक्षःस्थलमें श्रीफलकी समान पुष्ट और ऊंचे दो स्तन शोभायमान होते हैं, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४४ ॥

युग्मांगदविभूषाढ्या युवतीनां शिरोमणिः ।
यशोदासुतपत्नी च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ४५

हे देवि ! तुम्हारी दोनों भुजाओंमें दो बाजुओंके विद्यमान होनेसे परम श्री सम्पादित होती है, तुम्हीं स्त्रियोंकी शिरकी मणिस्वरूपहो, तुम यशोदानंदन श्रीकृष्णचंद्र आनंदकंदकी भार्या हो तुम्हें नमस्कार है ॥ ४५ ॥

रूपयौवनसम्पन्ना रत्नालंकारधारिणी ।
एकेन्दुकोटिसौंदर्य्या लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ४६

हे देवि ! तुम परम रूपवती और यौवन युक्तहो तुम रत्नालंकारोंसे विभूषित होकर परम शोभा धारण करती हो, तुम्हारी कान्ति करोड पूर्णचंद्रमाकी कान्तिसेभी उज्ज्वल है, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४६ ॥

रमा रामा रामपत्नी राजराजेश्वरी तथा ।
राज्यदा राज्यहन्त्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते४७

हे देवि तुम्हारा ही रमा और रामा नाम हुआ है तुम्हीं रामचन्द्रकी स्त्री जानकी हो तुम्हीं राजराजेश्वरी हो तुम्हीं प्रसन्न होकर राज्य देती हो और तुम्हीं कुपित होकर राज्य विनाश कर देती हो तुम्हें नमस्कार है ॥ ४७॥

लीलालावण्यसम्पन्ना लोकानुग्रहकारिणी ।
लालनाप्रीतिदात्री च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते४८

हे जननि ! तुम्हीं लोकोंके ऊपर अनुग्रह करती हो । स्त्रियें तुमसेही परम प्रीतिलाभ करती हैं, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४८ ॥

विद्याधरी तथा विद्या वसुदा त्वं हि वन्दिता।
विन्ध्याचलवासिनी च लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥

हे देवि ! तुम्हीं विद्या, तुम्हीं विद्याधरी तुम्हीं धन देनेवाली और तुम्हीं केवल वंदन करनेके योग्य हो, तुम्हीं विन्ध्यवासिनीरूपसे विन्ध्याचल पर्वत पर वास करती हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ४९ ॥

शुभकांचनगौरांगी शंखकंकणधारिणी ।
शुभदा शीलसम्पन्ना लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ५०

हे देवि! तुम निर्मल कंचनकी समान गौरवर्णवाली हो, तुम्हारे हाथमें शंख और कंगन विराजमान रहता है, तुम्हीं कल्याणकी देनेवाली और श्रेष्ठ चरित्रसे युक्त हो, तुम्हें नमस्कार है ॥ ५० ॥

षट्चक्रभेदिनी त्वं हि षडैश्वर्यप्रदायिनी ।
षोडशी वयसा त्वं हि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते५१

हे जननि ! तुम्हीं षट्चक्रका भेदन करनेवाली हो, तुम्हीं छै प्रकारका ऐश्वर्य देनेवाली हो, तुम सोलह वर्षकी अवस्थावाली नई स्त्री हो, तुम्हें नमस्कार है५१

सदानन्दमयी त्वं हि सर्व्वसम्पत्तिदायिनी ।
संसारतारिणी देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ५२॥

हे देवि ! तुम सदा आनंदमयी हो, तुम्हीं संपूर्ण संपत्ति देनेमें समर्थ और तुम्हीं इस घोर संसारसे तार सकती हो, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ५२ ॥

सुकेशी सुखदा देवि सुन्दरी सुमनोरमा ।
सुरेश्वरी सिद्धिदात्री शिरसा प्रणमाम्यहम् ५३

हे देवि ! तुम्हारे केश मनोहर हैं, तुम्हीं परम सुंदरी और मनमोहिनी हो, तुम देवताओंकी ईश्वरी और सिद्धिकी देनेवाली हो, तुम्हारे अनुग्रहसेही सुख प्राप्त होता है, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ५३ ॥

सर्व्वसंकटहन्त्री च सत्यसत्त्वगुणान्विता ।
सीतापतिप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम्५४

हे देवि ! तुम संपूर्ण संकट दूर करती हो, तुम सत्यपरायण और सतोगुणशालिनी हो, तुमनेही सीतापति श्रीरामचन्द्रजीकी रानीरूपसे अयोध्यापुरीको पवित्र किया है, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ५४ ॥

हेमांगी च हास्यमुखी हरिचेतोविमोहिनी ।
हरिपादप्रिया देवि शिरसा प्रणमाम्यहम् ५५॥

हे देवि ! तुम तपेहुए सुवर्णकी समान गोरे वर्णवाली हो तुमनेही हरिका मन मोहित किया है,

तुम्हारा चित्त हरिचरणोंमें ही सदा रत रहता है, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं॥ ५५॥

क्षेमङ्करी क्षमादात्री क्षौमवासविधारिणी।
क्षीरमध्या च क्षेत्रांगी लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते ५६

हे देवि! तुम कल्याण करनेवाली, मोक्ष देनेवाली और क्षौम अर्थात् रेशमीन वस्त्र धारण करनेवाली हो, तुम्हारी कमरने पतली होनेसे अत्यन्त शोभा धारण की है, तुम्हारे अङ्गोंमें संपूर्ण तीर्थ क्षेत्र विराजमान रहते हैं, मैं मस्तक नवायकर तुम्हें प्रणाम करता हूं॥ ५६॥

श्रीशंकर उवाच।

अकारादिक्षकारान्तं लक्ष्मीदेव्याः स्तवं शुभम्।
पठितव्यं प्रयत्नेन त्रिसन्ध्यश्च दिनेदिने ५७॥

श्रीमहादेवजी बोले कि हे पार्वती! तुम्हारे पूछनेके अनुसार मैंने लक्ष्मीमाहात्म्य और अकारादिक्षकारान्तवर्णमय लक्ष्मीस्तोत्र वर्णन किया, यह कल्याणका देनेवाला स्तोत्र प्रतिदिन तीनों संध्याओंमें यत्नसहित पाठ करना उचित है॥ ५७॥

पूजनीया प्रयत्नेन कमला करुणामयी ।
वाञ्छाकल्पलता साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी५८

जो अभिलषित फल देनेमें कल्पलतिका है, जो भक्ति और मुक्ति देती है, इन्हीं करुणामयी लक्ष्मीजीका यत्नसहित पूजन करना चाहिये ॥ ५८ ॥

इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु शृणुयाच्छ्रावयेदपि ।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य सत्यं सत्यं हि पार्वति५९॥

जो मनुष्य इस लक्ष्मीस्तोत्रको पढता अथवा सुनता है व दूसरे मनुष्यको श्रवण कराता है, हे पार्वती ! उसके निःसंदेह संपूर्ण मनोरथ सिद्ध होजाते हैं ॥ ५९ ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
तञ्च दृष्ट्वा भवेन्मूको वादी सत्यं न संशयः६०

हे गौरी ! जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस पवित्र स्तोत्रका पाठ करता है, उसके दर्शनमात्रसेही गूंगा बोलनेकी शक्तिको प्राप्त होजाता है, इसमें संदेह नहीं है ॥ ६० ॥

शृणुयाच्छ्रावयेद्यस्तु पठेद्वा पाठयेदपि ।

राजानो वशमायान्ति तं दृष्ट्वा गिरिनन्दिनि६१

हे गिरिनन्दिनी पार्वती ! जो मनुष्य इस स्तोत्रको श्रवण करता है, व दूसरेको सुनाता है, पढता है व दूसरेको पढाता है, उसके दर्शनसेही राजालोग वशमें होजाते हैं ॥ ६१ ॥

तं दृष्ट्वा दुष्टसंघाश्च पलायन्ते दिशो दश ।
भूतप्रेतग्रहा यक्षा राक्षसाः पन्नगादयः ॥
विद्रवन्तिभयार्त्ता वै स्तोत्रस्यापि च कीर्त्तनात्॥

जो मनुष्य इस लक्ष्मीस्तोत्रका कीर्त्तन करता है, उसके केवल देखनेसेही दुष्टगण दशों दिशाको भाग जाते हैं, और क्या भूत, क्या प्रेत, क्या ग्रह, क्या यक्ष, क्या राक्षस, क्या सर्प इत्यादि सबही डरकर भाग जाते हैं, इसमें संदेह नहीं ॥ ६२ ॥

सुराश्च असुराश्चैव गन्धर्वाः किन्नरादयः ।
प्रणमन्ति सदा भक्त्या तं दृष्ट्वा पाठकं मुदा६३

जो मनुष्य इस स्तोत्रको पढता है, उसको क्या देवता, क्या गंधर्व क्या किन्नर सब देखतेही आनन्दित हो भक्तिसहित प्रणाम करते हैं ॥ ६३ ॥

धनार्थी लभते चार्थं पुत्रार्थी च सुतं लभेत् ।
राज्यार्थी लभते राज्यं स्तवराजस्य कीर्त्तनात् ६४

इस अत्युत्तम स्तवका कीर्त्तन करनेसे धनकी इच्छा करनेवाला धन, पुत्रकी इच्छा करनेवाला पुत्र और राज्यकी इच्छा करनेवाला राज्यलाभ करता है ॥ ६४ ॥

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्व्वंगनागमः ।
महापापोपपापं च तरन्ति स्तवकीर्त्तनात् ६५॥

क्या ब्रह्महत्या, क्या मद्यपान, क्या चोरी, क्या गुरुस्त्रीगमन, क्या महापातक, क्या उपपातक इस स्तवका कीर्त्तन करनेपर इसके प्रभावसे संपूर्ण पापोंसे छुटकारा होता है ॥ ६५ ॥

गद्यपद्यमयी वाणी वदनात्तु प्रजायते ।
अष्टसिद्धिमवाप्नोति लक्ष्मीस्तोत्रस्य कीर्त्तनात्॥

इस लक्ष्मीस्तोत्रका कीर्त्तन करनेसे अपने आपही मुखसे गद्यपद्यमयी वाणी प्रादुर्भूत हुआ करती है और कीर्त्तनकारी निःसंदेह आठप्रकारकी सिद्धि प्राप्त करता है ॥ ६६ ॥

वन्ध्या चापि लभेत्पुत्रं गर्भिणी प्रसवेत्सुतम् ।
पठनात्स्मरणात्सत्यं वच्मि ते गिरिनन्दिनि६७

हे गिरिनन्दिनी ! मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि इस स्तोत्रके पढनेसे व श्रवण करनेसे बांझस्त्रीभी पुत्रलाभ करती है और गर्भवतीस्त्रीको श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त होता है ॥ ६७ ॥

भूर्ज्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।
भक्त्या संपूजयेद्यस्तु गन्धपुष्पाक्षतैस्तथा ६८
धारयेद्दक्षिणे बाहौ पुरुषः सिद्धिकांक्षया ।
योषिद्वामभुजे धृत्वा सर्वसौख्यमयी भवेत्६९

जो मनुष्य लक्ष्मीकी इच्छा करे, वह भोजपत्र पर रोली और कुंकुमसे इस स्तवको लिख, गंध पुष्पादिसे भक्तिसहित पूजा करके दक्षिणभुजामें धारण करे, स्त्रियेंभी बांई भुजामें धारण कर संपूर्ण सुखोंसे सुखी होती हैं ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

विषं निर्विषतां याति अग्निर्याति च शीतताम् ।
शत्रवो मित्रतां यान्ति स्तवस्यास्य प्रसादतः७०

इस स्तवराजके प्रभावसे विषमें निर्विषता, अग्निमें शीतलता और शत्रुगणोंमें मित्रता प्राप्त होजाती है ॥ ७० ॥

बहुना किमिहोक्तेन स्तवस्यास्य प्रसादतः ।
वैकुण्ठे च वसेन्नित्यं सत्यं वच्मि सुरेश्वरि ७१॥

हे पार्वती ! इसका माहात्म्य और अधिक क्या वर्णन करूं, इसकेही प्रसादसे अंतसमय वैकुण्ठधाममें नित्य वास होता है, इसमें संदेह नहीं है ॥ ७१ ॥

इति श्रीरुद्रयामले हरपार्वतीसंवादे कन्हैयालालमिश्रकृतभाषाटीका-सहिताकारादिक्षकारान्तवर्णग्रथितं लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम् ॥

कमलास्तोत्रम् ।

ओङ्काररूपिणी देवि विशुद्धसत्त्वरूपिणी ।
देवानां जननी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥ १ ॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम ओंकार-स्वरूपिणी हो. तुम्हीं विशुद्धसत्त्व गुणरूपिणी हो और तुम्हीं देवताओंकी माता हो । हे सुंदरि ! तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ १ ॥

तन्मात्रञ्चैव भूतानि तव वक्षःस्थलं स्मृतम् ।
त्वमेव वेदगम्या तु प्रसन्ना भव सुंदरि॥ २ ॥

हे सुन्दरि ! पञ्चभूत और पञ्चतन्मात्रा तुम्हारी छाती है, केवल वेदद्वारा तुम्हारा तत्त्व जाना जाता है, तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ २ ॥

देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसकिन्नरैः ।
स्तूयसे त्वं सदा लक्ष्मि प्रपन्ना भव सुन्दरि॥३॥

हे देवि लक्ष्मी ! देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर सबही सदा तुम्हारी स्तुति करते हैं,तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ ३ ॥

लोकातीता द्वैतातीता समस्तभूतवेष्टिता ।
विद्वज्जनकीर्तिता च प्रसन्ना भव सुंदरि ॥४॥

हे जननि ! तुम लोकसे परे, तुम्हीं द्वैतसे परे और तुम्हीं संपूर्ण भूतगणोंसे घिरी हुई रहती हो, विद्वान लोग सदा तुम्हारा गुण कीर्त्तन करते हैं। हे सुन्दरि! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ ४ ॥

परिपूर्णा सदा लक्ष्मि त्रात्री तु शरणार्थिषु ।
विश्वाद्या विश्वकर्त्री च प्रसन्ना भव सुन्दरि ५॥

हे देवि लक्ष्मी ! तुम नित्यपूर्णा, तुम्हीं शरणागत जनोंका उद्धार करनेवाली हो, विश्वकी आदि और विश्वकी करनेवालीभी केवल तुम्हीं हो। हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्राति प्रसन्न होओ ॥ ५ ॥

ब्रह्मरूपा च सावित्री त्वद्दीप्त्या भासते जगत् ।
विश्वरूपा वरेण्या च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥६॥

हे जननि तुम ब्रह्मरूपिणी हो, तुम्हीं सावित्री हो, तुम्हारी दीप्तिसेही त्रिजगत् प्रकाशित होता है, तुम्हीं विश्वरूपा और वर्णन करनेके योग्य हो, हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्राति प्रसन्न होओ ॥ ६ ॥

क्षित्यप्तेजोमरुद्व्योमपञ्चभूतस्वरूपिणी ।
बन्धादेः कारणं त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि७॥

हे जननि ! क्षिति, जल, तेज, मरुत् और व्योम, तुम इन्हीं पंचभूतोंका स्वरूप हो। तुम्हीं गंध, जलका रस, तेजका रूप, वायुका स्पर्श और आकाशमें

शब्द तुम्हीं हो, तुम्हीं इस पंचभूतोंके गुण प्रपंचका कारण हो, अर्थात् तुम्हारे प्रभावसेही यह गुणसमूह प्रकाशित होते हैं, हे देवि ! तुम हमपर प्रसन्न होओ ७

महेशे हैमवती त्वं कमला केशवेऽपि च ।
ब्रह्मणः प्रेयसी त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि॥८॥

हे देवि ! तुम्हीं शूलपाणि महादेवजीकी प्रियतमा हैमवती हो, तुम्हीं केशवकी प्रियतमा और तुम्हीं ब्रह्माके यहां प्रेयसी हो विराजमान रहती हो, तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ ८ ॥

चण्डी दुर्गा कालिका च कौशिकी सिद्धिरूपिणी ।
योगिनी योगगम्या च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥९॥

हे देवि ! तुम चंडी, तुम्हीं दुर्गा, तुम्हीं कालिका, तुम्हीं कौशिकी, तुम्हीं सिद्धिरूपिणी, तुम्हीं योगिनी और केवल योगसेही तुमको प्राप्त किया जाता है तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ ९ ॥

बाल्ये च बालिका त्वं हि यौवने युवतीति च।
स्थविरे वृद्धरूपा च प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥१०॥

हे देवि ! तुम बाल्यकालमें बालिका यौवनकालमें युवती और वार्द्धक्यकालमें वृद्धरूपसे प्रकाशित होती हो, हे सुंदरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ १० ॥

गुणमयी गुणातीता आद्या विद्या सनातनी ।
महत्तत्त्वादिसंयुक्ता प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥११॥

हे जननि ! तुम गुणमयी, गुणसे परे तुम्हीं आदि तुम्हीं सनातनी और तुम्हीं महत्तत्वादिसंयुक्त हो हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होवो ॥ ११ ॥

तपस्विनी तपःसिद्धिः स्वर्गसिद्धिस्तदर्थिषु ।
चिन्मयी प्रकृतिस्त्वं तु प्रसन्ना भव सुन्दरि १२॥

हे जननि ! तुम्हीं तपस्वियोंकी तपःसिद्धि स्वर्गार्थिगणोंकी स्वर्गसिद्धि, तुम्हीं आनन्दस्वरूप और तुम्हीं मूलप्रकृति हो, हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ १२ ॥

त्वमादिर्जगतां देवि त्वमेव स्थितिकारणम् ।
त्वमन्ते निधनस्थानं स्वेच्छाचारा त्वमेवहि १३

हे देवि ! तुम्हीं जगत्की आदि हो, तुम्हीं स्थिति-का एक मात्र कारणहो, देहके अंतमें जीवगण तुम्हारेही निकट चले जाते हैं,तुम्हीं स्वेच्छाचारिणी (तुम्हें नमस्कार है, तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ)॥ १३ ॥

चराचराणां भूतानां बहिरन्तस्त्वमेव हि ।
व्याप्यव्यापकरूपेण त्वं भासि भक्तवत्सले १४

हे भक्तवत्सले ! तुम चराचर जीवगणोंके बाहर और भीतर दोनों स्थलोंमें विराजमान रहती हो, तुम्हीं व्याप्य और व्यापक रूपसे प्रकाशित होती हो (तुम्हें नमस्कार है)॥ १४ ॥

त्वन्मायया हृतज्ञाना नष्टात्मानो विचेतसः ।
गतागतं प्रपद्यन्ते पापपुण्यवशात्सदा ॥ १५॥

हे जननि ! जीवगण तुम्हारी मायासेही हतज्ञान और चेतनारहित होकर पुण्यके वशसे वारंवार इस संसारमें आवागमन करते हैं ॥ १५ ॥

तावत्सत्यं जगद्भाति शुक्तिकारजतं यथा ।
यावन्न ज्ञायते ज्ञानं चेतसा नान्वगामिनी १६

जैसे सीपीका स्वरूप जाना हुआ न होनेसे वह चांदीके समान जान पडती है, फिर उसके स्वरूपका ज्ञान होनेसे वह भ्रम दूर होजाता है, तैसेही जबतक ज्ञानमय चित्तमें तुम्हारा स्वरूप नहीं जाना जाता है तबतकही यह जगत् सत्यसा जान पड़ता है परंतु तुम्हारे स्वरूपका ज्ञान उत्पन्न होजानेसे यह सारा संसार मिथ्याभूत ज्ञात होजाता है ॥ १६ ॥

त्वज्ज्ञानात्तु सदा युक्तः पुत्रदारगृहादिषु ।
रमन्ते विषयान्सर्वानन्ते दुःखप्रदान् ध्रुवम् १७

जो मनुष्य तुम्हारे ज्ञानसे अलग रहते हुए जगत्को सत्य विचार कर विषयोंमें लगे रहते हैं, निःसंदेह अंतमें उनको महादुःख मिलता है ॥ १७ ॥

त्वदाज्ञया तु देवेशि गगने सूर्य्यमण्डलम् ।
चन्द्रश्च भ्रमते नित्यं प्रसन्ना भव सुन्दरि १८॥

हे देवेशि ! तुम्हारी आज्ञासेही सूर्य और चंद्रमा आकाशमण्डलमें यथानियम भ्रमण करते हैं, तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ १८ ॥

ब्रह्मेशविष्णुजननी ब्रह्माख्या ब्रह्मसंश्रया।
व्यक्ताव्यक्ता च देवेशि प्रसन्ना भव सुन्दरि १९

हे देवेशि! तुम्हीं ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वरकी जननी हो अर्थात् तुमसेही इनकी उत्पत्ति हुई है। तुम ब्रह्माख्या और ब्रह्मसंश्रया हो, तुम्हीं प्रगट और तुम्हीं गुप्तरूपसे विराजमान रहतीहो हे सुंदरि! तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ १९ ॥

अचला सर्व्वगा त्वं हि मायातीता महेश्वरि।
शिवात्मा शाश्वता नित्या प्रसन्ना भव सुन्दरि२०

हे देवि! तुम अचल, तुम्हीं सर्वगामिनी तुम्हीं मायासे परे, तुम्हीं शिवात्मा और तुम्हीं नित्य हो हे सुंदरि! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ २० ॥

सर्व्वकायनियन्त्री च सर्व्वभूतेश्वरेश्वरी।
अनन्ता निष्कला त्वं हि प्रसन्ना भवसुन्दरि२१

हे देवि! तुम सबके देहकी रक्षा करती हो तुम्हीं संपूर्ण जीवोंकी ईश्वर और ईश्वरी हो. तुम्हीं अनन्त और अखंड हो तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ २१ ॥

सर्व्वेश्वरी सर्व्ववन्द्या अचिन्त्या परमात्मिका।
भुक्तिमुक्तिप्रदा त्वं हि प्रसन्ना भव सुन्दरि२२॥

हे जननि ! तुम सबकी ईश्वरी हो, सबही भक्ति सहित तुम्हारी वंदना करते हैं, तुम्हीं अचिन्त्या और परमात्मस्वरूपिणी हो, तुम्हारे प्रसादसेही भुक्ति और मुक्ति प्राप्त होती है, हे सुन्दरि ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ २२ ॥

ब्रह्माणी ब्रह्मलोके त्वं वैकुण्ठे सर्व्वमंगला ।
इन्द्राणी अमरावत्यामम्बिका करुणालये२३॥

हे जननी ! तुम्हीं ब्रह्मलोकमें ब्रह्माणी, वैकुण्ठमें सर्वमङ्गला, अमरावतीमें इन्द्राणी और वरुणालयमें अम्बिकास्वरूपिणी हो, (तुम्हें नमस्कार है) ॥ २३ ॥

यमालये कालरूपा कुबेरभवने शुभा ।
महानन्दाग्निकोणे च प्रसन्ना भव सुन्दरि२४॥

तुम यमके गृहमें कालरूप, कुवेरके भवनमें शुभदायिनी और अग्निकोणमें महानन्दस्वरूपिणी हो हे सुन्दरी ! तुम हमारे प्रति प्रसन्न होओ ॥ २४ ॥

नैर्ऋत्यां रक्तदन्ता त्वं वायव्यां मृगवाहिनी।
पाताले वैष्णवीरूपा प्रसन्ना भव सुन्दरि॥२५॥

तुम नैर्ऋतमें रक्तदन्ता, वायुकोणमें मृगवाहिनी और तुम पातालमें वैष्णवीरूपसे विराजमान रहती हो हे सुन्दरि! तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ २५ ॥

सुरसा त्वं मणिद्वीपे ऐशान्यां शूलधारिणी।
भद्रकाली च लंकायां प्रसन्ना भव सुन्दरि२६

हे देवि तुम मणिद्वीपमें सुरसा, ईशानकोणमें शूलधारिणी और तुम्हीं लंकापुरीमें भद्रकालीरूपसे स्थित हो, हे सुन्दरि! तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥२६

रामेश्वरी सेतुबन्धे सिंहले देवमोहिनी।
विमला त्वं च श्रीक्षेत्रे प्रसन्ना भव सुन्दरि२७

हे देवि! तुम सेतुबन्धमें रामेश्वरी, सिंहलद्वीपमें देवमोहिनी और पुरुषोत्तममें विमला नामसे स्थित हो, हे सुन्दरि! तुम हमपर प्रसन्न होओ ॥ २७ ॥

कालिका त्वं कालिघट्टे कामाख्या नीलपर्व्वते।

विरजा औड्रदेशे त्वं प्रसन्ना भव सुन्दरि॥२८॥

हे देवि लक्ष्मि! तुम कालीघाटपर कालिका, नीलपर्वतपर कामाख्या और औड्र देशमें विरजारूपसे विराजमान रहती है, हे सुन्दरि! तुम हमारे ऊपर प्रसन्न होओ॥२८॥

वाराणस्यामन्नपूर्णा अयोध्यायां महेश्वरी।
गयासुरी गयाधाम्नि प्रसन्ना भव सुंदरि॥ २९॥

हे जननि! तुम वाराणसीक्षेत्रमें अन्नपूर्णा, अयोध्यानगरीमे महेश्वरी और गयाधाममें गयासुरी रूपसे विराजमान रहती हो हे सुन्दरि! तुम हमारेसे प्रसन्न होओ॥ २९॥

भद्रकाली कुरुक्षेत्रे त्वञ्च कात्यायनी व्रजे।
महामाया द्वारकायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ३०॥

हे देवि! कुरुक्षेत्रमें भद्रकाली, व्रजधाममें कात्यानी और द्वारकापुरीमें महामाया रूपसे विराजमान रहती हो हे सुन्दरि! तुम हमसे प्रसन्न होओ॥३०॥

क्षुधा त्वं सर्व्वजीवानां वेला च सागरस्य हि।

महेश्वरी मथुरायां प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३१॥

हे देवि ! तुम सम्पूर्ण जीवोंमें क्षुधारूपिणी हो, तुम्हीं मथुरानगरीमें महेश्वरी रूपसे विराजमान रहती हो हे सुन्दरि ! तुम हमारे ऊपर प्रसन्न होओ ३१॥

रामस्य जानकी त्वञ्च शिवस्य मनमोहिनी ।
दक्षस्य दुहिता चैव प्रसन्ना भव सुन्दरि॥३२॥

हे देवि ! तुम्हीं रामचन्द्रकी जानकी, तुम्हीं शिवका मन मोहनेवाली और तुम्हीं दक्षकी पुत्री हो। हे सुन्दरि ! तुम हमसे प्रसन्न होवो ॥३२॥

विष्णुभक्तिप्रदा त्वं च कंसासुरविनाशिनी ।
रावणनाशिनी चैव प्रसन्ना भव सुन्दरि ॥३३॥

हे जननि ! तुम्हीं विष्णुकी भक्ति देनेवाली, तुम्हीं कंसासुरका नाश करनेवाली और तुम्हीं रावणका नाश करनेवाली हो, हे सुन्दरि ! तुम हम पर प्रसन्न होवो ॥ ३३ ॥

लक्ष्मीस्तोत्रमिदं पुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः

सर्व्वज्वरभयं नश्येत्सर्व्वव्याधिनिवारणम् ३४॥

जो मनुष्य भक्तिसहित सर्व व्याधिके नाश करनेवाले इस पवित्र लक्ष्मीस्तोत्रका पाठ करता है, उसको किसीप्रकार ज्वरका भय आक्रमण नहीं करसकता है ॥ ३४ ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यमापदुद्धारकारणम् ।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यः पठेत्सततं नरः ३५॥
मुच्यते सर्व्वपापेभ्यो तथा तु सर्व्वसंकटात् ।
मुच्यते नात्र सन्देहो भुवि स्वर्गे रसातले ॥३६॥

यह लक्ष्मीस्तोत्र अत्यन्त पवित्र और विपत्तिके नाश करनेका कारण है. जो मनुष्य तीनों संध्याओंमें अथवा केवल एकवार ही इसका पाठ करता है वह संपूर्ण पापोंसे छूट जाता है और क्या स्वर्ग, क्या मर्त्य, क्या पाताल कहींभी उसको किसीप्रकारका संकट नहीं होता इसमें संदेह नहीं है ॥३५॥३६॥

समस्तं च तथा चैकं यः पठेद्भक्तितत्परः ॥
स सर्व्वदुष्करं तीर्त्वा लभते परमां गतिम् ३७॥

जो मनुष्य भक्तियुक्त चित्तसे यह स्तोत्र संपूर्ण अथवा केवल एकभी श्लोक पढता है, वह संपूर्ण पापोंसे छूटकर निःसंदेह परमगतिको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥

सुखदं मोक्षदं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
स तु कोटीतीर्थफलं प्राप्नोति नात्र संशयः ३८

जो मनुष्य भक्तियुक्त होकर सुख और मोक्षके देनेवाले इस लक्ष्मीस्तोत्रका पाठ करता है, उसको करोड तीर्थोंका फल प्राप्त होता है, इसमें संशय नहीं है ॥ ३८ ॥

एका देवी तु कमला यस्मिंस्तुष्टा भवेत्सदा ।
तस्याऽसाध्यं तु देवेशि नास्ति किंचिज्जगत्त्रये ३९

हे देवेश ! केवल लक्ष्मीही जिससे संतुष्ट होती है उसको त्रिलोकीमें कुछभी असाध्य नहीं है ॥ ३९ ॥

पठनादपि स्तोत्रस्य किं न सिद्ध्यति भूतले ।
तस्मात्स्तोत्रवरं प्रोक्तं सत्यं सत्यं हि पार्वति ४०

हे पार्वती ! मैं सत्य सत्य कहता हूं कि पृथ्वीपर ऐसा कोई विषय नहीं है, जो इस स्तोत्रका पाठ

करनेसे सिद्ध न किया जाय, इस कारण यह स्तवराज मैंने कीर्त्तन किया ॥ ४० ॥

इति श्रीलक्ष्मीस्तोत्र समाप्त ॥

अथ लक्ष्मीकवचम् ।

लक्ष्मी मे चाग्रतः पातु कमला पातु पृष्ठतः ।
नारायणी शीर्षदेशे सर्वांगे श्रीस्वरूपिणी॥१॥

लक्ष्मी हमारे अग्रभागकी रक्षा करे, कमला हमारी पीठकी रक्षा करे, नारायणी हमारे मस्तककी और श्रीस्वरूपिणी देवी हमारे संपूर्ण अंगोंका रक्षाविधान करे ॥ १ ॥

रामपत्नी तु प्रत्यंगे रामेश्वरी सदाऽवतु ।
विशालाक्षी योगमाया कौमारी चक्रिणी तथा२
जयदात्री धनदात्री पाशाक्षमालिनी शुभा ।
हरिप्रिया हरिरामा जयंकरी महोदरी ॥ ३ ॥
कृष्णपरायणा देवी श्रीकृष्णमनमोहिनी ।
जयंकरी महारौद्री सिद्धिदात्री शुभंकरी ॥४॥

सुखदा मोक्षदा देवी चित्रकूटनिवासिनी ।
भयं हरतु भक्तानां भवबन्धं विमुञ्चतु ॥५॥

जो रामपत्नी और रामेश्वरी है, वही विशालाक्षी योगमाया हमारे सब अंग उपअंगोंका रक्षाविधान करो। वह कौमारी है, वह चक्रधारिणी है, वह जयकी देनेवाली है, वह पाशाक्षमालिनी है। वह कल्याणी है, वह हरिप्रिया है, वह हरिरामा है, वह जयंकरी है, वह महादेवी है, वह कृष्णपरायणा है, वह श्रीकृष्णका मन मोहन करनेवाली है, जो महाभयंकर है, जो सिद्धि देनेवाली है, जो शुभंकरी है, वह सुख तथा मोक्षकी देनेवाली है, और जिनके चित्रकूट निवासिनी इत्यादिक नाम हैं, वही अनपायिनी (अपायरहित ऐसी) लक्ष्मी देवी हम भक्तनके भय दूर करके सदा रक्षा करो और हमारे संसारीबंधनका छेदन करो ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥

कवचन्तम्महापुण्यं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा मुच्यते सर्वसंकटात् ६

जो मनुष्य भक्तियुक्त होकर प्रतिदिन तीनवार अथवा केवल एक वारही इस परम पवित्र लक्ष्मीक-

वचका पाठ करता है, वह संपूर्ण संकटोंसे छूट जाता है ॥ ६ ॥

कवचस्यास्य पठनं धनपुत्रविवर्द्धनम् ।
भीतिविनाशनं चैव त्रिषु लोकेषु कीर्तितम् ७

इस कवचके पाठ करनेसे पुत्र और धनादिकी वृद्धि होती है, और भयसमूह दूर होजाता है,इसका माहात्म्य त्रिभुवनमें कहा है ॥ ७ ॥

भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनाकुंकुमेन तु ।
धारणाद्गलदेशे च सर्व्वसिद्धिर्भविष्यति ॥८॥

भोजपत्रपर रोचना और कुंकुमसे इसको लिखकर कंठमें धारण करनेसे संपूर्ण कामना सिद्ध होजाती हैं ॥ ८ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम् ।
मोक्षार्थी मोक्षमाप्नोति कवचस्य प्रसादतः ॥९॥

इस कवचके प्रसादसे अपुत्र मनुष्यको पुत्रलाभ होता है. धनकी इच्छा करनेवालेको धन और मोक्षकी इच्छा करनेवालेको निःसंदेह मोक्षपदवी प्राप्त होती है ॥ ९ ॥

गर्भिणी लभते पुत्रं वन्ध्या च गर्भिणी भवेत् ।
धारयेद्यदि कण्ठे च अथवा वामबाहुके॥१०॥

यदि स्त्रियें कण्ठ अथवा बांई भुजामें इस कवचको नियमसे धारण करती हैं, तो गर्भवती स्त्रीको उत्तम पुत्र प्राप्त होता है और वांझ स्त्रीभी गर्भवती होती है॥ १० ॥

यः पठेन्नियतो भक्त्या स एव विष्णुवद्भवेत् ।
मृत्युव्याधिभयं तस्य नास्ति किञ्चिन्महीतले११

जो मनुष्य नियमित होकर भक्तिसहित इस कवचका पाठ करताहै वह विष्णुकी समानताको प्राप्त होता है। और पृथ्वीपर मृत्यु अथवा व्याधिका भय उसको आक्रमण नहीं कर सकता॥ ११ ॥

पठेद्वा पाठयेद्वापि शृणुयाच्छ्रावयेदपि ।
सर्व्वपापविमुक्तस्तु लभते परमां गतिम्॥१२॥

जो मनुष्य इस कवचका पाठ करताहै, वा अध्ययन कराताहै, स्वयं सुनता अथवा दूसरेको सुनाता

है वह संपूर्ण पापोंसे छूटकर परमगतिको प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

संकटे विपदे घोरे तथा च गहने वने ।
राजद्वारे च नौकायां तथा च रणमध्यतः ॥
पठनाद्धारणादस्य जयमाप्नोति निश्चितम् १३

क्या संकट, क्या घोर विपद्, क्या गहनवन, क्या राजद्वार, क्या नांवका मार्ग, क्या रणमें जो कोई स्थानभी क्यों न हो इस कवचका पाठ करनेसे अथवा धारण करनेसे सर्वत्र जयलाभ प्राप्त हो जाता है ॥ १३ ॥

अपुत्रा च तथा वन्ध्या त्रिपक्षं शृणुयाद्यदि ।
सुपुत्रं लभते सा तु दीर्घायुष्कं यशस्विनम् १४

बांझ स्त्री अथवा जिसके पुत्रजन्म नहीं है, वह यदि तीन पक्ष पर्यन्त इस कवचको श्रवण करे तो दीर्घायु, महायशवान् सुपुत्र लाभ कर सकती है, इसमें संदेह नहीं है ॥ १४ ॥

शृणुयाद्यः शुद्धबुद्ध्या द्वौ मासौ विप्रवक्रतः।
सर्वान्कामानवाप्नोति सर्वबन्धाद्विमुच्यते १५॥

जो मनुष्य विशुद्धमन होकर दो महीनेतक ब्राह्मणके मुखसे इस कवचको श्रवण करता है, उसकी संपूर्ण कामना सिद्ध होती हैं, और वह सब प्रकारके संसारबंधनोंसे छूटजाता है॥ १५॥

मृतवत्सा जीववत्सा त्रिमासं श्रवणं यदि।
रोगी रोगाद्विमुच्येत पठनान्माससमध्यतः १६॥

जिस स्त्रीके पुत्र उत्पन्न होकर जीते नहीं वह तीन महीने तक इस कवचको भक्तिसहित धारणकरे तो जीववत्साहो अर्थात् उसके पुत्र जिये। और रोगी मनुष्यभी पाठ करनेसे एक मासके भीतरही रोगसे छूट जाता है॥ १६॥

लिखित्वा भूर्जपत्रे च अथवा ताडपत्रके।
स्थापयेन्नियतं गेहे नाग्निचौरभयं क्वचित्॥१७॥

जो मनुष्य भोजपत्र अथवा ताड़के पत्तोंपर इस कवचको लिखकर गृहमें स्थापन करता है,

इसको अग्नि वा चोर इत्यादिका भय कभी नहीं होता ॥ १७ ॥

शृणुयाद्धारयेद्वापि पठेद्वा पाठयेदपि ।
यः पुमान्सततं तस्मिन्प्रसन्नाः सर्वदेवताः १८

जो मनुष्य प्रतिदिन इस कवचको श्रवण करता है, पाठ करता है, अथवा दूसरेको अध्ययन कराता है और जो मनुष्य इसको धारण करता है उसपर देवतालोग सदा संतुष्ट रहते हैं ॥ १८ ॥

बहुना किमिहोक्तेन सर्व्वजीवेश्वरेश्वरी ।
आद्याशक्तिः सदालक्ष्मीर्भक्तानुग्रहकारिणी ॥
धारके पाठके चैव निश्चला निवसेद् ध्रुवम् १९॥

अधिक अब कहांतक कहूं, जो मनुष्य इस कवचका पाठ करता है, वा धारण करता है, संपूर्ण जीवोंकी ईश्वरी भक्तजनपर अनुग्रह करनेवाली आद्याशक्ति लक्ष्मीदेवि निश्चल होकर उस मनुष्यमें वास करती है, इसमें संदेह नहीं ॥ १९ ॥

इति तन्त्रोक्तं लक्ष्मीकवचं समाप्तम् ॥

अथ कमलाप्रीतिसाधनम्।

मानसे सारसे रम्ये नानामुनिसमावृते।
प्रजापतिं समासीनं नारदो वाक्यमब्रवीत्॥१॥

एक समय अनेक ऋषियोंके सहित मानससरोवरके रमणीक आश्रममें प्रजापति ब्रह्माजी सुखपूर्वक विराजमान थे इसी अवसरमें नारदने कथाके प्रसंगमें पूंछा ॥ १ ॥

नारद उवाच।

भोभो देव महाभाग सर्व्वलोकपितामह।
कमलासाधनं पुण्यं वक्तुमर्हसि तत्त्वतः॥ २॥

नारदजी बोले-कि हे देव! हे महाभाग! तुम सर्वलोकोंके पितामह हो, मैं पवित्र कमलासाधनके श्रवण करनेकी अभिलाषा करता हूं अर्थात् किस प्रकारसे कार्यका अनुष्ठान करनेसे मनुष्य देवीकी प्रीति साधन कर सकते हैं उसको विस्तार पूर्वक वर्णन करो ॥ २ ॥

केनोपायेन भो देव नरो दुःखहरो भवेत् ।
केनोपायेन भो ब्रह्मन् चञ्चला अचला गृहे ३॥

हे देव ! हे ब्रह्मन् ! किस उपायसे मनुष्य दुःखसे छुटकारा पा सकते हैं ? और किस उपायसे चपला लक्ष्मी अचल होकर स्वगृहमें वास करती है ? ॥३॥

ब्रह्मोवाच ।

साधु पृष्टं महाभाग मुनिपुंगव नारद ।
परितुष्टोऽस्मि ते वत्स वक्ष्यामि यत्तवेप्सितम्४

ब्रह्माजी बोले कि हे ऋषिसत्तम नारद हे वत्स ! तुमने अत्युत्तम विषय पूछा है, तुम्हारा प्रश्न सुनकर मैं अन्यन्त संतुष्ट हुआ हूं, जो हो तुम जिसके श्रवण करनेकी अभिलाषा करते हो, उसका वर्णन करता हूं श्रवण करो ॥ ४ ॥

पुत्रजन्मनि योगे च रविसंक्रमणे तथा ।
चन्द्रसूर्य्यग्रहे चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक्५

पुत्रजन्मके समय, योगके समय, जिस समय सूर्य संक्रातिमें हो और चन्द्र सूर्यका ग्रहण होनेके

समय जो मनुष्य स्नान करता है, वही लक्ष्मीयुक्त होता है ॥ ५ ॥

नित्यमुषसि सन्ध्यायां तथा च भास्करोदये।
अशुचिस्पर्शने चैव यः स्नातिस च लक्ष्मीभाक्६

जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल, संध्यासमय और सूर्योदयके समय स्नान करता है और अपवित्र वस्तुस्पर्श करतेही जो उसी समय जलमें गोता लगाकर स्नान करता है वह लक्ष्मीयुक्त होता है ॥ ६ ॥

माघे मासि हविष्याशी तथा संयतमानसः।
मौनीभूत्वाउषःकालेयःस्नाति स च लक्ष्मीभाक्७

जो मनुष्य मन जीतकर और मौन हो हविष्यान्नभोजन करके माघके महीनेमें प्रतिदिन स्नान करता है, वह लक्ष्मीयुक्त होता है ॥ ७ ॥

गयायाञ्च कुरुक्षेत्रे तथा वाराणसीपुरे।
सागरसंगमे चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक्

जो पुरुष गयामें, कुरुक्षेत्रमें, वाराणसी (बनारस) तथा सागरके संगममें स्नान करता है, वह लक्ष्मीयुक्त होता है, इसमें संदेह नहीं ॥ ८ ॥

एकादश्यामामलकीं विष्णवे यः प्रयच्छति ।
आमलकीजले चैव यः स्नाति स च लक्ष्मीभाक्

जो मनुष्य एकादशी तिथिको विष्णुको आमला प्रदान करता है अथवा आमलेके जलमें स्नान करता है वह मनुष्य लक्ष्मीयुक्त होता है ॥ ९ ॥

अमावस्यां तथा षष्ठ्यां नवम्यां प्रतिपद्यपि ।
वर्जयेद्दन्तकाष्ठन्तद्यदि श्रीमभिकांक्षति ॥१०॥

जो मनुष्य लक्ष्मीलाभ होनेकी कामना करे, वह अमावस्या छठ और प्रतिपदा (पडवा) को दन्त, धावन (दतोन) न करे ॥ १० ॥

ज्येष्ठ मासि शुक्लपक्षे तथा च दशमीतिथौ ।
गंगातोये च हस्तर्क्षे यःस्नाति स च लक्ष्मीभाक्

जो मनुष्य ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें दशमी तिथिको हस्तनक्षत्र होनेपर गंगाजीके जलमें स्नान करता है वह मनुष्य लक्ष्मीयुक्त होता है ॥ ११ ॥

विरुद्धाचरणं हिंसा परदारोपसेवनम् ।
पारुष्यानृतपैशुन्यमसम्बद्धाभिभाषणम् ॥१२॥

परद्रव्याभिध्यानञ्च मनसानिष्टचिन्तनम् ।
एतत्सर्व्वं वर्जयेद्यः स भवेत्कमलाप्रियः॥१३॥

विरुद्ध आचरण, हिंसा, पराई स्त्रीकी सेवा, कठोर वचन, अनृत, पैशुन्य, असंबद्ध वार्ता, पराये धनका अभिलाष, मनमें अनिष्टकी चिन्ता करना, जो मनुष्य इन सबका परित्याग करता है, वह निःसंदेह लक्ष्मीका प्रियपात्र होता है ॥ १२ ॥ १३ ॥

ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय धर्म्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
प्रातःसन्ध्यामुपासीत दन्तधावनपूर्व्विकाम्॥१४॥
उभे मूत्रपुरीषे च दिवा कुर्य्यादुदङ्मुखः ।
रात्रौ च दक्षिणे कुर्य्यादुभे सन्ध्ये यथा दिवा ।
छायायामन्धकारे यो लक्ष्मीं समभिकांक्षति १५

जो मनुष्य लक्ष्मीके प्राप्त होनेकी इच्छा करे, वह ब्राह्ममुहूर्त्तमें उठकर धर्म और अर्थकी चिन्ता करे, दतौन करके प्रातःकालकी संध्या करे, दिनमें उत्तरको मुखकरके और रात्रिमें दक्षिणको मुख करके

मूत्र व पुरीष (मल)त्याग करे, दोनों सन्ध्याओंमें भी दिनकी समान करे, दिनमें अथवा रात्रिको छाया और अंधकारमें मूत्र और पुरीष त्याग करे १४॥१५॥

गोमयांगारवल्मीकफालाकृष्टे जले शुचौ।
मार्गमध्ये न त्यजेयुर्मूत्रश्चापि पुरीषकम् ॥१६॥

लक्ष्मीलाभ करनेकी इच्छा हो तो,गोबर, कोयला, बमई, हलाकृष्ट (ज्योती हुई भूमि) में, जलके पवित्र स्थानमें और रस्तेमें मलमूत्र त्याग न करे ॥ १६ ॥

अन्तर्जलाद्देवगृहाद्वल्मीकान्मूषिकस्थलात्।
परेषां शौचशिष्टाश्च श्मशानानां मृदं त्यजेत् १७

मृत्तिकाके शौचसमयमें जलके भीतरकी, देवालयकी, बमईकी, चूहेके भट्टेकी और श्मशानकी इन सब स्थानोंसे मट्टी ग्रहण न करे और दूसरे किसी मनुष्यकी शौच करी हुई मट्टी भी त्याग करे ॥ १७॥

एकां लिंगे मृदं दद्याद्वामहस्ते मृदद्वयम्।
उभयोर्द्वे च दातव्ये यदि श्रीमभिकांक्षति१८॥

यदि लक्ष्मी प्राप्त होनेकी अभिलाषा हो तो मूत्र त्याग करके एकवार लिंग, दोवार बांया हाथ और दोनों हाथोंमें दोवार मट्टीका लेप करे ॥ १८ ॥

विनाकारणमन्विष्य स्नायाच्च पुनः पुनः ।
नोद्वर्त्तनस्नानांते च यदि श्रीमभिकांक्षति॥१९॥

जो मनुष्य लक्ष्मीप्राप्त करनेकी इच्छाकरे, वह कभी विना कारण बारंबार स्नान न करे और स्नान करनेके उपरान्त तैलादिकका मलनाभी उचित नहीं है ॥ १९ ॥

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न कुर्यान्मर्म्मपीडकम् ।
पैशुन्यश्च त्यजेत्सोऽपि यदि श्रीमभिकांक्षति२०॥

सत्य और प्रिय वचन बोले जिससे लोकको मर्म पीडा प्राप्तहो ऐसा वाक्यप्रयोग न करे और सर्वथा पैशुन्य अर्थात् धूर्त्तता त्याग करे, इस प्रकारका आचरण करनेसेही लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥२०॥

लक्ष्मीस्तोत्रप्रारंभः ॥

ईश्वर उवाच ।

त्रैलोक्यपूजिते देवि कमले विष्णुवल्लभे ।
यथा त्वं सुस्थिरा कृष्णे तथा भव मयि स्थिरा १

ईश्वर बोले कि हे देवि ! लक्ष्मी तुम्हीं त्रैलोक्यकी पूजनीय हो । हे विष्णुवल्लभे ! तुम श्रीकृष्णमें जिस प्रकार स्थिर होकर रहतीहो तिसी प्रकार हममें अचल होओ ॥ १ ॥

ईश्वरी कमला लक्ष्मीश्चला भूतिर्हरिप्रिया ॥
पद्मा पद्मालया सम्पदुच्चैः श्रीः पद्मधारिणी ॥२॥

हे देवि ! तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं कमला, लक्ष्मी, चलभूति (चलऐश्वर्य) धारिणी इत्यादि नामोंसे युक्त हुई हो ॥ २ ॥

द्वादशैतानि नामानि लक्ष्मीं संपूज्य यः पठेत् ।
स्थिरा लक्ष्मीर्भवेत्तस्य पुत्रदारादिभिः सह॥३॥

जो मनुष्य लक्ष्मीजीकी पूजा करके इन द्वादश (बारह) नामोंका पाठ करता है, लक्ष्मी देवी उसमें अचल होती है और उसके पुत्र पौत्रादि उत्तरोत्तर (क्रमक्रमसे) वृद्धि प्राप्त होते हैं ॥ ३ ॥

इति विश्वसारतन्त्रोक्तं लक्ष्मीस्तोत्रं समाप्तम्।

अथ लक्ष्मीकवचप्रारंभः।

ईश्वर उवाच।

अथ वक्ष्ये महेशानि कवचं सर्वकामदम्।
यस्य विज्ञानमात्रेण भवेत्साक्षात्सदाशिवः ॥१॥

ईश्वर बोले कि हे महेशानि! अनन्तर सर्व कामका देनेवाला लक्ष्मीकवच कीर्त्तन करता हूं, जिसके जाननेसे तिसी समय शिवसायुज्य (साक्षात् सदाशिव) का लाभ होता है ॥ १ ॥

नार्चनं तस्य देवेशि मन्त्रमात्रं जपेन्नरः। स
भवेत्पार्व्वतीपुत्रः सर्वशास्त्रेषु पारगः ॥ २ ॥

हे देवेशि! उसको पूजा नहीं करनी होती, वह

केवल मंत्रकाही जप करके पार्वतीके समान होसकता है और वह सर्वशास्त्रमें पारदर्शी होजाता है॥२॥

विद्यार्थिना सदा सेव्या विशेषे विष्णुवल्लभा॥३॥

जो मनुष्य विद्याके लाभकी अभिलाषा करे वह यत्नपूर्वक विष्णुप्रिया लक्ष्मीकी आराधना करे ॥ ३॥

अस्याश्चतुरक्षरिविष्णुवनितारूपायाः कवचस्य श्रीभगवान् शिव ऋषिरनुष्टुप्छन्दो वाग्भवी देवता वाग्भवं बीजं लज्जाशक्ती रमा कीलकं कामबीजात्मकं कवचं मम सुपाण्डित्यकवित्वसर्व्वसिद्धिसमृद्धये जपे विनियोगः४॥

इस चतुरक्षरी विष्णुवनिता (लक्ष्मीके) कवचमें ऋषि श्रीभगवान् शिव, छन्द अनुष्टुप्, देवता वाग्भवी ऐंबीज, लज्जा शक्ति, रमा कीलक है। यह कवच कामबीजात्मक, सुपाण्डित्य, कवित्व और सर्वसिद्धिसमृद्धिके निमित्त विनियोग करना कहा है ॥ ४ ॥

ऐङ्कारी मस्तके पातु वाग्भवी सर्व्वसिद्धिदा ।
ह्रीं पातु चक्षुषोर्म्मध्ये चक्षुर्युग्मे च शांकरी ॥५॥

ऐंकारी हमारे मस्तककी रक्षाकरे, संपूर्ण सिद्धिको देनेवाली वाग्भवी ह्रीं हमारे दोनों नेत्रोंके मध्यकी और शांकरी हमारे दोनों नेत्रोंकी रक्षाकरे ॥ ५ ॥

जिह्वायां मुखवृत्ते च कर्णयोर्गण्डयोर्नसि ।
ओष्ठाधरे दन्तपंक्तौ तालुमूले हनौ पुनः ॥
पातु मां विष्णुवनिता लक्ष्मीः श्रीवर्णरूपिणी६

वर्णरूपिणी विष्णुवनिता लक्ष्मी हमारी जिह्वा, मुखमण्डल, दोनोंकर्ण, दोनों नासिका, ओष्ठ, अधर दन्तपंक्ति, तालुमूल (तालुआ) और ठोड़ीकी रक्षा-करे ॥ ६ ॥

कर्णयुग्मे भुजद्वन्द्वे स्तनद्वन्द्वे च पार्व्वती ।
हृदये मणिबन्धे च ग्रीवायां पार्श्वयोः पुनः ।
सर्व्वाङ्गे पातु कामेशी महादेवी समुन्नतिः॥७॥

पार्वतीनामक लक्ष्मी हमारे दोनों कानोंकी, दोनों भुजा, दोनों स्तन, हृदय, मणिबंध, गरदन और पार्श्वकी रक्षा करे, कामेशी महादेवी और समुन्नति हमारे संपूर्ण अंगोंकी रक्षाविधान करे ॥ ७ ॥

व्युष्टिः पातु महामाया उत्कृष्टिः सर्व्वदावतु ।
सन्धि पातु सदा देवी सर्व्वत्र शम्भुवल्लभा ॥८॥

व्युष्टि, महामाया और उत्कृष्ट सदा हमारी रक्षा करे, देवीशंभुवल्लभा सर्वत्र सदा हमारे संधी (मिलाप) के रक्षाविधानमें नियुक्त हो ॥ ८ ॥

वाग्भवी सर्व्वदा पातु पातु मां हरिगेहिनी ।
रमा पातु सदा देवी पातु माया स्वराट् स्वयम्९॥

वाग्देवी सदा हमारी रक्षा करे, हरगेहिनी निरन्तर हमारी रक्षा करे और रमा व माया सदा हमारी रक्षाविधानमें नियुक्त हो ॥ ९ ॥

सर्व्वांगे पातु मां लक्ष्मीर्विष्णुमाया सुरेश्वरी ।
विजया पातु भवने जया पातु सदा मम॥१०॥

विष्णुमाया सुरेश्वरी लक्ष्मीजी हमारे संपूर्ण अंगोंकी रक्षाकरै विजया हमारे घरमें सदा रक्षाविधानमें नियुक्त हो और जया हमारी रक्षा करे ॥ १० ॥

शिवदूती सदा पातु सुन्दरी पातु सर्व्वदा ।
भैरवी पातु सर्व्वत्र भैरुण्डा सर्व्वदाऽवतु ११॥

शिवदूती और सुन्दरी सदा हमारी रक्षा करैं, भैरवी सर्व स्थानमें और भैरुण्डा सदा हमारी रक्षा विधान करैं ॥ ११ ॥

त्वरिता पातु मां नित्यमुग्रतारा सदाऽवतु ।
पातु मां कालिका नित्यं कालरात्रिः सदाऽवतु १२

त्वरिता प्रतिदिन हमारे रक्षाविधानमें यत्नवान् हों, उग्रतारा सदा हमारी रक्षा करे, कालिका प्रतिदिन और कालरात्रि सदा हमारी रक्षा करे ॥ १२ ॥

नवदुर्गा सदा पातु कामाख्या सर्व्वदावतु ।
योगिन्यः सर्व्वदा पांतु मुद्राः पांतु सदा मम १३

नवदुर्गा, कामाख्या सदा हमारी रक्षा करैं और योगिनीगण व मुद्रासमूह सदा हमारी रक्षा करती रहैं ॥ १३ ॥

मातरः पांतु देव्यश्च चक्रस्था योगिनीगणाः ।
सर्व्वत्र सर्वकार्येषु सर्व्वकर्म्मसु सर्व्वदा ॥
पातु मां देवदेवी च लक्ष्मीः सर्व्वसमृद्धिदा॥१४॥

मातृदेवीगण, चक्रकी योगिनी गण सर्व्वत्र सव-

कार्यमें सदा हमारी रक्षा करें और संपूर्ण समृद्धि देनेवाली देवदेवी लक्ष्मी हमारे रक्षा विधानमें यत्न करे ॥ १४ ॥

इति ते कथितं दिव्यं कवचं सर्वसिद्धये ।
यत्र तत्र न वक्तव्यं यदीच्छेदात्मनो हितम् १५॥

इसप्रकार मैंने तुम्हारे निकट सर्वसिद्धिका कारणस्वरूप अत्युत्तम दिव्यलक्ष्मीकवचका वर्णन किया जो अपने हितकी इच्छा करे वह कभी इसे दूसरेके निकट प्रकाश न करे ॥ १५ ॥

शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरि ।
न्यूनांगे अतिरिक्तांगे दर्शयेन्न कदाचन ॥१६॥

हे महेश्वरि! जो मनुष्य शठ भक्तिविहीन व निन्दक है और जो मनुष्य स्थूल अंगवाला अथवा जो मनुष्य किसी अंगसे हीन हो उसके निकट प्राणान्त होने पर भी यह कवच प्रकाशित न करे ॥ १६ ॥

न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं संदर्श्य शिव हा भवेत् १७॥

दुरात्मा मनुष्योंके निकट कभी इस स्तवको

प्रकाश न करे जो मनुष्य प्रकाश करता है उसको शिवहत्याके पापमें लिप्त होना होता है ॥ १७ ॥

कुलीनाय महोच्छ्राय दुर्गाभक्तिपराय च।
वैष्णवाय विशुद्धाय दद्यात्कवचमुत्तमम् १८॥

जो मनुष्य कुलीन उन्नतिमान् दुर्गाकी भक्ति करनेवाला विष्णुभक्त है और जो मनुष्य विशुद्धाचित्त है, उसकोही यह अत्युत्तम दिव्यकवच दान करे ॥ १८ ॥

निजशिष्याय शान्ताय धनिने ज्ञानिने तथा।
दद्यात्कवचमित्युक्तं सर्व्वतन्त्रसमन्वितम् १९॥

शान्तशील अपने शिष्यको यह सर्वतंत्रमय कवच दान करे और जो मनुष्य भक्तिके धनसे धनवान् और ज्ञानी हो उसको दान करसकते हैं और किसीकोभी दान न करे ॥ १९ ॥

विलिख्य कवचं दिव्यं स्वयम्भुकुसुमैः शुभैः।
स्वशुक्रैः परशुक्रैश्च नानागन्धसमन्वितैः २० ॥
गोरोचनाकुंकुमेन रक्तचन्दनकेन वा।

सुतिथौ शुभयोगे वा श्रवणायां रवेर्दिने॥ २१॥
अश्विन्यांकृत्तिकायांवाफल्गुन्यां वा मघासु च।
पूर्व्वभाद्रपदायोगे स्वात्यां मंगलवासरे ॥२२॥
विलिखेत्प्रपठेत्स्तोत्रं शुभयोगे सुरालये ।
आयुष्मत्प्रीतियोगे च ब्रह्मयोगे विशेषतः २३॥
इन्द्रयोगे शुभयोगे शुक्रयोगे तथैव च ।
कौलवे बालवे चैव वणिजे चैव सत्तमः ॥२४॥

शुभतिथिको, शुभयोगमें, श्रवणनक्षत्रमें, रविवारको अश्विनीनक्षत्रमें, कृत्तिकानक्षत्रमें, फाल्गुनीनक्षत्रमें, मघानक्षमें, पूर्वभाद्रपदनक्षत्रमें, स्वातीनक्षत्रमें, मंगलवारको, विशेषकरके ब्रह्मयोगमें, इन्द्रयोगमें शुभयोगमें, शुक्रयोगमें, कौलव बालव और वणिजकरणयोगके इन सब दिनोंमें स्वयम्भू कुसुम, गोरोचन, कुंकुम, लालचंदन अथवा अत्युत्तम गन्धद्रव्यसे इस दिव्य कवचको लिखकर इसको पूजा करनेसे दीर्घायु और श्रीकी वृद्धि होती है॥ २०॥ २१॥ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

शून्यागारे श्मशाने वा विजने च विशेषतः ।
कुमारीं पूजयित्वादौ यजेद्देवीं सनातनीम् २५॥

सूने घरमें श्मशान अथवा निर्जनस्थानमें कुमारीकी पूजा करके फिर सनातनी देवी लक्ष्मीकी पूजा करैं ॥ २५ ॥

मत्स्यमांसैः शाकसूपः पूजयेत्परदेवताम् ।
घृताद्यैः सोपकरणैः पूपसूपैर्विशेषतः ॥ २६ ॥
ब्राह्मणान्भोजयित्वादौ प्रीणयेत्परमेश्वरीम् २७

मत्स्य मांस सूप (दाल) शाक पिट्ठी घृत उपकरण (सामग्री) आदि अनेक प्रकारके द्रव्योंसे लक्ष्मीकी आराधना करे; प्रथम ब्राह्मणोंको भलीभाँतिसे भोजन कराकर फिर देवीकी प्रीतिका साधन करना उचित है ॥ २६ ॥ २७ ॥

बहुना किमिहोक्तेन कृते त्वेवं दिनत्रयम् ।
तदाधरेन्महारक्षां शङ्करेणाभिभाषितम् ॥ २८॥

अधिक और क्या वर्णन करूं जो मनुष्य तीन दिन इसप्रकार लक्ष्मीदेवीकी आराधना करता है

उसको किसी प्रकारकी विपदमें नहीं पडना परता वह संपूर्ण आपदाओंसे रक्षा पाताहै. शंकरका कथन किया हुआ यह वाक्य कभी विफल होने वाला नहीं है ॥ २८ ॥

मारणद्वेषणादीनि लभते नात्र संशयः ।
स भवेत्पार्व्वतीपुत्रः सर्व्वशास्त्रविशारदः॥२९॥

जो मनुष्य भक्तिसहित लक्ष्मी देवीकी पूजा करके यह दिव्य कवच पढता है उसके मारणद्वेषादि मंत्रोंकी सिद्धि होतीहै पार्व्वतीका प्रियपुत्र और सर्व्वशास्त्रविशारद होता है ॥ २९ ॥

गुरुर्देवो हरः साक्षात्पत्नी तस्य हरप्रिया ।
अभेदेन भजेद्यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः ॥ ३०॥

जो मनुष्य एकान्तचित्तहो लक्ष्मी देवीकी आराधना करता है वह साक्षात् देवदेव शिवजीकी सायुज्यमुक्तिको प्राप्त होता है; उसकी स्त्री हरप्रियाकी समान होतीहै और यह कहना भी अत्युक्ति नहीं होगा कि, उस पुरुषकी सिद्धि निकटही वर्त्तमानहै ॥ ३० ॥

सर्वदेवमयीं देवीं सर्वमन्त्रमयीं तथा।
सुभक्त्या पूजयेद्यस्तु स भवेत्कमलाप्रियः ३१॥

जो मनुष्य भक्तिसहित सर्व्वदेवमयी और सर्वमंत्रमयी लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है. वह निःसंदेह कमलाका प्रियपात्र होता है ॥ ३१ ॥

रक्तपुष्पैस्तथा गन्धैर्वस्त्रालंकरणैस्तथा।
भक्त्या यः पूजयेद्देवीं लभते परमां गतिम् ३२॥

जो मनुष्य लालफूल, लालचन्दन वस्त्र और अलंकारादिसे भक्तिसहित लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है वह अन्तकालमें परमगतिको प्राप्त होता है ॥ ३२ ॥

नारी वा पुरुषो वापि यः पठेत्कवचं शुभम्।
मन्त्रसिद्धिः कार्यसिद्धिर्लभते नात्र संशयः ३३॥

क्या नारी क्या पुरुष जो मनुष्य इस कल्याणके देनेवाले कवचका पाठ करता है वह निःसंदेह मंत्रसिद्धि और कार्यसिद्धिका लाभ करता है ॥३३ ॥

पठति य इह मर्त्यो नित्यमार्द्रान्तरात्मा
जपफलमनुमेयं लप्स्यते यद्विधेयम्

स भवति पदमुच्चैः सम्पदां पादनम्रः
क्षितिपमुकुटलक्ष्मीर्लक्षणानां चिराय ॥ ३४ ॥

जो मनुष्य भक्तिपरायणचित्तसे प्रतिदिन इस लक्ष्मीकवचका पाठ करता है वह अनायासही जयका फललाभ करलेता है, उत्तरोत्तर उन्नति सम्पद और श्रीवृद्धिको प्राप्त होता है, इसमें संशय नहीं है ॥ ३४ ॥

इति श्रीविश्वसारतन्त्रोक्तं लक्ष्मीकवचं कन्हैयालालमिश्र-
कृतभाषाटीकासहितं समाप्तम् ।

अथ लक्ष्मीमाहात्म्यप्रारंभः ॥

अथ वक्ष्ये लक्ष्मीदेव्याः पूजाफलं विधानतः ।
सर्वा वै विफला पूजा कमलापूजनं विना ॥१॥

हे महेशानि ! अनन्तर लक्ष्मीदेवीकी पूजा करनेसे जैसा फल मिलता है, उसका वर्णन करता हूं. श्रवण करो कि, लक्ष्मीजीकी पूजा न करके जो और किसीकी पूजा की जाती है, वह संपूर्णही विफल होती है ॥ १ ॥

परिपूर्णफलं नैव जीवहीनं यथा वपुः ॥ २ ॥
यथा यथा देवतायाः पूजनं वा यथा गुरोः ।
तथैव हि च सर्वेषां लक्ष्म्यास्तु पूजनं भवेत् ३॥

लक्ष्मीजीकी पूजाके सिवाय और देवताकी पूजा करना जीवहीन देहकी समान विफल हो जाती है, जिस प्रकार और देवता व गुरुदेवकी पूजा करते हैं इसी विधिके अनुसार लक्ष्मीदेवीकी अर्चना करनाभी सदा उचित है ॥ २ ॥ ३ ॥

यथाशक्ति हि वितरेत्कमलायै यदीप्सितम् ।
अशक्यं शक्यमेवं वा दानाभावे फलात्ययः ४॥

अशक्य हो अथवा शक्यही हो, मनमें जिसका अभिलाष हो, उसे लक्ष्मीदेवीके समर्पण करे, दानके अभावसे फलकी हानि होती है ॥ ४ ॥

पुष्पं तस्यै च यद्दत्तं तन्मेरुसदृशं मतम् ।
दत्तमन्यच्च यत्किञ्चिद्भक्ष्यभोज्यादिकं तथा ।
अल्पमप्यथवा तस्य हीनं बहुगुणं भवेत् ॥५॥

लक्ष्मीदेवीको जो पुष्पप्रदान किया जाता है, वह सुमेरुपर्वतके समान होता है । क्या भक्ष्य, क्या भोज्य और जो कुछ देवीको दिया जाता है, वह अल्प (थोडा) हो अथवा सामान्यही हो, उससे बहुगुण फल हो जाता है ॥ ५ ॥

कमलापूजनाच्चैव कमलाराधनादपि ।
कमलावन्दनादेव कमलासदृशो भवेत् ॥ ६ ॥

कमलाकी पूजा करनेसे और उसकी आराधना करनेसे तथा उसकी वन्दना करनेसे कमलाकी समान हो जा सकता है ॥ ६ ॥

कमला च भवेद्देवी कमला सर्व्वदेवता ।
कमला पार्व्वती साक्षात् कमला सर्व्वकारणम् ७

केवल कमलाही श्रेष्ठ देवी, वही सर्व्वदेवमयी, वह मूर्तिमान पार्वती और वही केवल सबका कारण है ॥ ७ ॥

य याः पूजनमात्रेण त्रैलोक्यपूजनं भवेत् ।
ला च महादेवी त्रिधा मूर्तिर्व्यवस्थिता ।

परा चैवापरा चैव तृतीया च परापरा ॥ ८ ॥

केवल लक्ष्मीजीकोही पूजा करनेसे त्रिभुवनकी पूजा होजाती है, कमला साक्षात् परा और अपरा तथा परापरा इन तीन मूर्त्तियोंसे व्यवस्थित है ॥८॥

यत्र काले न किञ्चित्स्याद्देवासुरमहोरगाः ।
त्रैलोक्यं लयमानञ्च तदाभूत्कमलात्मिका॥९॥

जिस समय त्रिभुवन जलमें डूबा हुआथा, जिस समय क्या देव, क्या असुर, क्या पन्नग (सर्प) कुछ भी विद्यमान न थे उस समयभी एक कमला मात्र विराजमान थीं ॥ ९ ॥

भूर्भुवोर्मूर्तिरूपा सा एका पूज्या तु सा भवेत्।
नित्यक्रमेण दवेशी पूजयेद्विधिपूर्व्वकम् १० ॥

लक्ष्मीदेवी भूस्वरूपा और भुवःस्वरूपिणी है,केवल वही सबकी अपेक्षा (बनिस्बत) पूज्यतम है। हे परमेश्वरी ! विधानानुसार प्रतिदिन उसकी पूजा करनी उचित है ॥ १० ॥

अष्टोत्तरं शत्तं वापि तन्मन्त्रं प्रजपेत्सुधीः। ११॥

पवित्रमतिसे सेवक भक्तिसहित देवी लक्ष्मीका बीजमंत्र अष्टोत्तरशत (एकसौ आठ) वार जप करे ॥ ११ ॥

असुरश्च तथा नागा ये च दुष्टग्रहा अपि ।
भूतवेतालगन्धर्व्वा डाकिन्यो यक्षराक्षसाः १२
क्रूराश्च देवताः सर्व्वे भूर्भुवश्चैव भैरवाः ।
पृथिव्यादीनि सर्व्वाणि ब्रह्माण्डं सचराचरम् १३
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।
ते तुष्टाः परितुष्टाश्च यस्तु लक्ष्मीं प्रपूजयेत् १४

जो मनुष्य लक्ष्मी देवीकी पूजा करता है, उससे क्या असुर, क्या सर्प, क्या दुष्टग्रह, क्या भूत, क्या वेताल, क्या गंधर्व, क्या डाकिनी, क्या यक्ष राक्षस, क्या क्रूर देवता गण, क्या भू, क्या भुवः क्या भैरव गण क्या पृथ्वीआदि चराचर ह्माण्ड, क्या ब्रह्मा, क्या विष्णु, क्या रुद्र, क्या सदाशिव सबही अत्यन्तसंतुष्ट होतेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

कमलापूजनाच्चैव कोटिपूजाफलं लभेत् ।
हन्ति विघ्नान्पूजिता सा तथा शत्रुं महोत्कटम् ।
व्याधयः सर्व्वरिष्टानि पलायन्ते न संशयः १५॥

केवल लक्ष्मीजीकी पूजा करनेसे करोड़ गुणी पूजाका फल होता है, उनकी पूजा होनेसे सब विघ्न और महोत्कट (महातीव्र) शत्रु नष्ट होता है. इसके अतिरिक्त सब व्याधियें और सब अरिष्ट (रोगादिक) भाग जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं ॥ १५ ॥

ग्रहा यक्षाः क्षयं यान्ति भूतवेतालपन्नगाः ॥१६॥
असुरा गुह्यका! प्रेता योगिनी गुह्यडाकिनी ।
महामयानि दुर्भिक्षमुत्पातानि सहस्रशः ॥ १७ ॥
दुःस्वप्नमपमृत्युश्च अन्ये ये ये उपद्रवाः ।
कमलापूजनादेव न तस्य प्रभवन्ति च ॥ १८ ॥

लक्ष्मी देवीकी पूजा करनेसे सब प्रकारकी व्याधि और सब अरिष्ट विनष्ट होजाते हैं और ग्रह, यक्ष, प्रभृतिभी क्षयको प्राप्त होते हैं,कमलाकी पूजा करनेसे भूत, वेताल, पन्नग, असुर, गुह्यक, प्रेत, योगिनी,

गुह्यडाकिनी, महाभय, दुर्भिक्ष, उत्पात, दुःस्वप्न, अपमृत्यु (अकालमृत्यु) सबही नाशको प्राप्त होते हैं कोई भी उसको तिरस्कार करनेमें समर्थ नहीं हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

आणिमादिकासिद्धीश्च पातालगुटिकाञ्जनाः ।
चतुष्कं दिव्यवेतालमाप्नुयात् कमलार्चनात् १९

केवल लक्ष्मीजीकी पूजा करनेसे अणिमादिक सिद्धि, पातालसिद्धि, गुटिकासिद्धि, वेतालसिद्धि और अंजनासिद्धि प्राप्त होती है ॥ १९ ॥

यथा यथा तत्प्रियकृत्सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ।
महाभये समुत्पन्ने कमलां यः प्रपूजयेत् ।
तत्क्षणाल्लभते मोक्षं सत्यं सत्यं न संशयः२०

मनुष्य जितना जितना लक्ष्मीकी प्रीतिका साधन करता है, वही सब सिद्धियोंका ईश्वर होता है; महाभय उपस्थित होनेपर जो मनुष्य कमलाकी पूजा करता है, वह तिसीसमय विपदसे मुक्त होजाता है, इसमें संदेह नहीं है ॥ २० ॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिवः ।

ते तुष्टाः सर्व्वतुष्टाश्च कमलां यः प्रपूजयेत् ॥
गोहत्या स्त्रीवधश्चैव सर्व्वं पापं प्रणश्यति२१॥

जो मनुष्य कमलाकी पूजा करताहै, उससे क्या ब्रह्मा, क्या विष्णु, क्या रुद्र, क्या ईश्वर, क्या सदाशिव सबही प्रसन्न होते हैं, और गोहत्या, स्त्रीहत्या, इत्यादि सब पापसमूह दूर होजाते हैं ॥ २१ ॥

मातरः पितरश्चैव भ्रातरश्चैव सर्व्वतः ।
ते तुष्टाः सर्व्वतुष्टाश्च कमलां यः प्रपूजयेत्॥२२॥

जो मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करताहै उसके क्या मातृगण, क्या पितृगण, क्या भ्रातृगण सबही परम संतुष्ट होते हैं ॥ २२ ॥

भुक्तिमुक्तिफलं तेषां सौभाग्यं सर्व्वसम्पदः ।
विष्णुलोके वसेन्नित्यं त्रिनेत्रो भगवानिव॥२३॥

जो मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करताहै, उसको भुक्ति और मुक्तिका फल मिलताहै और वह सौभाग्य और सर्वप्रकारकी सम्पत्तिको प्राप्त होताहै और वह देहके अन्तमें त्रिनेत्र भगवानकी समान विष्णुलोकमें वास करता है ॥ २३ ॥

षष्टिकोटिसहस्राश्वमेधानां स फलं लभेत्।
प्रतिवर्षञ्च यः कुर्य्याद्भक्त्या तु कमलार्चनम्।
विष्णुलोके वसेन्नित्यं सर्व्वैश्वर्य्यसमन्वितः२४

जो मनुष्य भक्तिसहित प्रतिवर्ष लक्ष्मीजीकी पूजा करता है वह षष्टिकोटिसहस्र (साठ करोडहजार) अश्वमेध यज्ञके फल को प्राप्त होता है और वह सर्व ऐश्वर्यसमन्वित होकर विष्णुलोकमें वास करताहै२४॥

यः करोति हि पुण्यात्मा देवताप्रीतिमाप्नुयात्।
मनोभिलषितं प्राप्य अन्ते मोक्षमवाप्नुयात्२५

जो पुण्यात्मा मनुष्य लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है उससे संपूर्ण देवता प्रसन्न होतेहैं और वह मनुष्य इसलोकमें सब मनोभिलाष लाभपूर्वक देहके अन्तमें मोक्षको प्राप्त होताहै ॥ २५॥

यः करोति विधानेन सर्व्वान्कामान्समश्नुते।
इह भुक्त्वाखिलान्भोगान्देववत्प्रियदर्शनः।
अन्ते देव्यास्तु मिलनं लभते नात्र संशयः२६॥

जो मनुष्य विधानानुसार लक्ष्मीदेवीकी पूजा करता है, उसकी सब कामना पूर्ण होती है। वह देवताकी समान प्रियदर्शन हो इस लोकमें अखिल-भोगपूर्वक अन्तमें देवीगणोंसे मिल जाता है, इसमें सन्देह नहीं ॥ २६ ॥

माघे मासि सिते पक्षे पौर्णमास्यां तिथौ तथा।
स्नात्वाचम्यच शुद्धात्मान्यासान्कृत्वाविधानतः
दीपं संस्थाप्य पुरत उत्तराभिमुखः स्थितः।
अथ सावरणां देवीं ध्यात्वा विधिवदर्चयेत्२८

माघ मासमें शुक्लपक्षकी पौर्णमासी तिथिको स्नानपूर्वक आचमनकर विशुद्ध हो विधानानुसार न्यासविधि समाप्त करै फिर उत्तराभिमुख बैठे पूर्वकी ओर दीप स्थापनकर उसी दीपमें सावरणा लक्ष्मी-देवीका ध्यान करता हुआ यथाविधि पूजाकरै॥२८॥

अष्टोत्तरसहस्रन्तु जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥२९॥

इसी प्रकार यथाविधि पूजा करके अनन्यचित्तसे लक्ष्मीका बीजमंत्र अष्टोत्तरसहस्र (१००८) वार जप करै ॥ २९ ॥

एवं कृते महालक्ष्मीः प्रीता भवति सर्व्वदा ।
सर्व्वकामसमृद्धात्मा सर्व्वैश्वर्य्यसमन्वितः ।
सर्व्वलोकैकसामान्यः सञ्चरेच्च यथासुखम् ३०

इस भांति देवीकी आराधना करनेसे लक्ष्मी सदा उसके प्रति प्रसन्न रहती है । उस साधककी सर्वविध कामना पूर्ण होती है, और उसको सब प्रकारका ऐश्वर्य प्राप्त होता है, वह निःसंदेह जगतमें असामान्य रूपसे विचरण करता है ॥ ३० ॥

बहुना किमिहोक्तेन लक्ष्मीतत्त्वपरायणः ।
देव्यर्चकः पुमान्यः स्यात्स च सर्वोत्तमोत्तमः ३१

अधिक और वर्णन करनेका क्या प्रयोजन है, जो मनुष्य लक्ष्मीतत्त्वको जानते हैं और जो मनुष्य लक्ष्मीजीकी पूजा करते हैं वह निःसंदेह सर्वापेक्षा श्रेष्ठ हैं ॥ ३१ ॥

इति श्रीकन्हैयालालमिश्रकृतभाषाटीकासहितं
लक्ष्मीमाहात्म्यं समाप्तम् ।

अथ त्रैलोक्य मङ्गलात्मकं नाम लक्ष्मीस्तोत्रप्रारंभः ।

नमः कल्याणदे देवि नमोऽस्तु हरिवल्लभे ।
नमो भक्तप्रिये देवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते॥१॥

हे देवि ! तुम कल्याणदायिनी हो, तुम्हें नमस्कार है । हे हरिवल्लभे ! तुम्हें प्रणाम करताहूं । हे लक्ष्मीदेवि ! तुम भक्तजनोंके अनुरक्तहो, तुम्हें नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

नमो मायागृहीतांगि नमोस्तु हरिवल्लभे ।
सर्व्वेश्वरि नमस्तुभ्यं लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते॥२॥

हे देवि ! तुम मायाके वश होकर अनेक प्रकारके देह धारण करतीहो । हे विष्णु प्रिये ! तुम्हें नमस्कार है । हे देवि ! तुम सबकी ईश्वरी हो, तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ २ ॥

महामाये विष्णुधर्म्मपत्नीरूपे हरिप्रिये ।
वाञ्छादात्रि सुरेशानि लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥३॥

हे लक्ष्मी देवि ! तुमनेही महामायारूपसे जगतको मोहित किया है, तुम विष्णुकी धर्मपत्नी हो । हे हरिप्रिये ! तुम सबकी वांछा पूर्ण करती हो, इसलिये हे सुरेशानि ! मैं तुमको नमस्कार करता हूं ३॥

उद्यद्भानुसहस्राभे नयनत्रयभूषिते ।
रत्नाधारे सुरेशानि लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते॥४॥

हे देवि ! तुम्हारी दीप्ति उदय हुए हजार सूर्योंके समान दुर्निरीक्ष्य है अर्थात इतना तेज है कि देखी नहीं जाती; तुम तीन नेत्रोंसे परम शोभा पाती हो।हे देवि! केवल तुम्हीं रत्नोंका आधार हो । मैं तुम्हें प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

विचित्रवसने देवि भवदुःखविनाशिनि ।
कुचभारनते देवि ! लक्ष्मीदेवि नमोस्तुते ॥ ५ ॥

हे जननि ! तुमने विचित्र वस्त्र पहरकर मनोहर शोभा धारण की है, केवल तुम्हारे अनुग्रहसेही भवदुःखविमोचन होता है अर्थात संसारी दुःख छूट जाता है; तुम्हारे सिवाय और कोईभी संसारबंधनरूप दुःखसागरसे रक्षा करनेमें समर्थ नहीं है । हे

हे देवि! तुम्हारा अंग पुष्ट उरोजों (कुचों)के भार-से नम्रहै मैं तुम्हें प्रणाम करता हूं॥ ५॥

साधकाभीष्टदे देवि अन्नदानरतेऽनघे।
विष्ण्वानंदप्रदे मातर्लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते॥६॥

हे देवि! तुम साधकगणोंका मनोभीष्ट (मनका अभिलाष) पूर्ण करतीहो. तुम अन्नदानद्वारा प्राणि-योंकी जीवनरक्षामें निरंतर व्याप्त रहती हो, तुम्हारे पवित्र शरीरमें पापका लेशमात्र नहीं, हे मातः! सदा वैकुण्ठनाथ विष्णुके हृदयमें आनन्द देती हो. मैं तुम्हें नमस्कार करता हूं॥ ६॥

षट्कोणपद्ममध्यस्थे षडंगयुवतीमये।
ब्रह्माण्यादिस्वरूपे च लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते॥७॥

हे लक्ष्मीदेवि! तुम देहमें षट्कोणपद्मरूपसे वास करतीहो, तुम षडङ्ग युवती (सब दैविक स्त्रियों) में पतिव्रताहो. तुम्हीं ब्रह्माणी वाराही इत्यादि मातृगण नामसे कही गई हो तुम्हैं नमस्कारहै॥७॥

देवि त्वं चन्द्रवदने सर्व्वसाम्राज्यदायिनि।
सर्वानन्दकरे देवि लक्ष्मीदेवि नमोस्तु ते॥८॥

हे लक्ष्मीदेवि ! तुम्हारा वदनकमल पूर्णचन्द्रमाकी समान रमणीयहै, तुम प्रसन्न होनेसे चक्रवर्तीराज्य- तक देसकतीहो तुम्हीं सबको आनन्द देनेवालीहो तुम्हें नमस्कार करताहूं ॥ ८ ॥

पूजाकाले पठेद्यस्तु स्तोत्रमेतत्समाहितः ।
तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्ज्जायते नात्र संशयः९॥

जो मनुष्य पूजाके समय सावधान होकर इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसके घर निःसंदेह कमला अचल होकर सदा वास करती है ॥ ९ ॥

प्रातःकाले पठेद्यस्तु मन्त्रपूजापुरःसरम् ।
तस्य चान्नसमृद्धिः स्याद्वर्द्धमानो दिनेदिने॥१०॥

जो मनुष्य प्रातःकालके समय मंत्र और पूजादि समाप्त करके लक्ष्मीस्तोत्रका पाठ करता है, उसके घर अन्न और समृद्धिकी वृद्धि होतीहै और वही मनुष्य दिन २ श्री (लक्ष्मी) की वृद्धिको प्राप्त होता है ॥ १० ॥

यस्मै कस्मै न दातव्यं न प्रकाश्यं कदाचन ।
प्रकाशात्कार्य्यहानिः स्यात्तस्माद्यत्नेन गोपयेत्

जिस किसीके लिये यह स्तोत्र नहीं देना चाहिये अर्थात् सर्व साधारण मनुष्यको इसका दान करना उचित नहीं, इसे सदा गुप्त रखना उचित है । उसको साधारण मनुष्यके निकट प्रकाश करनेसे कार्य विफल और अनिष्ट होनेकी अत्यन्त संभावना होती है, इसलिये यत्नसहित इसको गुप्त रक्खें ॥ ११॥

त्रैलोक्यमंगलं नाम स्तोत्रमेतत्प्रकीर्त्तितम् ।
ब्रह्मविद्यास्वरूपञ्च महैश्वर्य्यप्रदायकम् ॥१२॥

यह स्तोत्र तीनों लोकोंको मंगल देनेवाला है; यह ब्रह्मविद्यास्वरूप और महदैश्वर्यदायक है इसमें संदेह नहीं ॥ १२ ॥

पठनाद्धारणान्मर्त्त्यस्त्रैलोक्यैश्वर्य्यवान्भवेत् ।
यद्धृत्वा पठनाद्देवाः सर्व्वैश्वर्य्यमवाप्नुयुः ॥१३॥

इस स्तोत्रका पाठ व इसको धारण करनेसे मनुष्य सहजहीमें त्रिभुवनके ईश्वर हो सकते हैं, यह स्तव पढ़तेही इसके प्रसादसे देवताओंके समान सब ऐश्वर्य्य प्राप्त होते हैं ॥ १३ ॥

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च धारणात्पठनाद्यतः ।
सृजत्यवति हरत्येव कल्पेकल्पे पृथक्पृथक्॥१४॥

इस स्तवके धारण और अध्ययन करनेसे ही जगत्स्रष्टा ब्रह्माजी कल्प कल्पमें नानाविधि सृजन करते हैं और इस स्तवराजके प्रसादसेही देवदेव विष्णु सृष्टिको प्रतिपालन और रुद्रदेव सबका संहार करते हैं ॥ १४ ॥

पुष्पाञ्जल्यष्टकं देव्यै मूलेनैव पठेत्ततः ।
युगकालकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात्१५॥

मूलमंत्र पाठ करके लक्ष्मीदेवीको आठ पुष्पाञ्जली देकर फिर इस स्तवका पाठ करके युगकालीनकृत (एक युगतक किये हुए) पूजाका फल मिलता है ॥

प्रीतिमन्योन्यतः कृत्वा कमला निश्चला गृहे ।
वाणी वक्रे वसेत्तस्य सत्यं सत्यं न संशयः१६॥

इस परमपवित्र स्तवराजको अध्ययन करनेसे लक्ष्मीदेवी उसके प्रति परमप्रीति लाभ करती है जो मनुष्य इस स्तोत्रका पाठ करता है उसके कंठमें

वाग्देवी निरन्तर वास करती है, इसमें किसी प्रका-
रका संशय नहीं ॥ १६ ॥

अष्टोत्तरशतश्चास्य पुरश्चर्य्याविधिः स्मृतः॥१७॥

यह स्तवराज अष्टोत्तरशत (१०८) बार अध्य-
यन करनेसेही इसका पुरश्चरण होता है ॥ १७ ॥

भूर्जे विलिख्य गुलिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि ।
कण्ठे वा दक्षिणे बाह्यौ सोऽपि सर्वतपोमयः१८

जो मनुष्य भोजपत्रपर इस स्तवको लिख तावीज
बनाय उस तावीजको सुवर्णमे मढाकर कंठ अथवा
दहिनी भुजामें धारण करता है, वह निःसंदेह सर्व-
तपोमय होता है ॥ १८ ॥

ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्गात्रं प्राप्य पार्वति ।
माल्यानि कौसुमान्येव भवन्त्येव न संशयः१९

हे पार्वती ! जो मनुष्य यह स्तोत्र अपने गात्रमें
धारण करता है,किसी प्रकारकाभी अस्त्र शस्त्र प्रक्षिप्त
(प्रयोग कियाहुआ) हो वह इस धारण करनेवालेके

गात्रमें निपतित होजाय, किन्तु वह उसको कुसुम-मालाकी समान बोध होता है,इसमें संदेह नहीं ॥१९॥

अस्यापि पठनात्सद्यः कुबेरोऽपि धनाधिपः ।
इन्द्राद्याः सकला देवा धारणात्पठनाद्यतः ॥
सर्व्वसिद्धीश्वराः सन्तः सर्वैश्वर्य्यमवाप्नुयुः ॥२०॥

इस स्तोत्रका पाठ करनेसेही इसके प्रसादसे कुबेरको धनाध्यक्षपद प्राप्त हुआ है और इन्द्रादिदेवतागणभी यह स्तव धारण और अध्ययन करके सब प्रकार सिद्धिलाभ करते और सब प्रकारके ऐश्वर्यके लाभको प्राप्त हुए हैं ॥ २० ॥

पुष्पाञ्जल्यष्टकं देव्यै मूलेनैव सकृत्पठेत् ।
संवत्सरकृतायास्तु पूजायाः फलमाप्नुयात्॥२१॥

जो मनुष्य मूलमंत्रपाठपूर्वक देवीको आठ पुष्पाञ्जली देकर केवल एकबार इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह संवत्सरकृत (एक वर्षतक करी हुई) पूजाके फलको प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

योधारयति पुण्यात्मा त्रैलोक्यमंगलं त्विदम् ।
स्तोत्रन्तु परमं पुण्यं सोऽपि पुण्यवतां वरः२२॥

जो पुण्यवान् मनुष्य त्रिलोकीका मंगलदाता यह परम पवित्र स्तोत्र धारण करताहै वह पुण्यवान् पुरुषोंमें अग्रणी कहकर कीर्तित होता है ॥ २२ ॥

सर्वैश्वर्ययुतो भूत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।
पुरुषो दक्षिणे बाहौ नारी वामभुजे तथा ॥
बहुपुत्रवती भूत्वा वन्ध्यापि लभते सुतम्२३॥

जो पुरुष भक्तिसहित यथानियम भोजपत्रपर यह स्तोत्र लिखकर दाहिनीभुजामें धारण करता है, वह सर्व ऐश्वर्यवान् होकर त्रिलोकका विजय करनेवाला होता है, और जो स्त्री बाँई भुजामें धारण करती है वह बहुत पुत्रवती होती है। इस पवित्र स्तोत्रको धारण करनेसे वन्ध्या अर्थात् बाँझ स्त्रियेंभी सर्वोत्तम पुत्रको प्राप्त होती हैं ॥ २३ ॥

ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि नैव कृन्तन्ति तं जनम् ।

पठेद्वा धारयेद्वापि यो नरो भक्तितत्परः ॥२४॥

जो मनुष्य भक्तितत्परचित्तसे इस स्तोत्रका पाठ करता है, अथवा अपने शरीरमें धारण करता है, उसको क्या शस्त्र क्या अस्त्रादि अधिक क्या ब्रह्मास्त्रभी छेदन करनेमें समर्थ नहीं हैं ॥ २४ ॥

एतत्तु स्तोत्रमज्ञात्वा योऽर्चयेज्जगदीश्वरीम्।
दारिद्र्यं परमं प्राप्य सोऽचिरान्मृत्युमाप्नुयात्२५

इस स्तोत्रको न जानकर जो मनुष्य जगदीश्वरीकी पूजा करता है, वह परम दरिद्रताको प्राप्त होकर शमन भवनको गमन करता है ॥ २५ ॥

यः पठेत्प्रातरुत्थाय सर्व्वतीर्थफलं लभेत्।
यः पठेदुभयोः सन्ध्योस्तस्य विघ्नो न विद्यते२६

जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर इस स्तवराजका पाठ करता है, उसको सब तीर्थोंमें जानेका फल मिलताहै, और जो मनुष्य दोनों संध्याओंके समय यह स्तवराज अध्ययन करता है, उसको किसी प्रकारके विघ्नमें निपतित होना नहीं होता ॥ २६ ॥

धारयेद्यः स्वदेहे तु तस्य विघ्नं न कुत्रचित् ।
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो भयस्तस्य न विद्यते॥२७॥

जो मनुष्य यह स्तोत्र अपने देहमें धारणकरताहै उसको किसी प्रकारका विघ्न आक्रमण नहीं करसकता और भूत, प्रेत, पिशाचप्रभृतिसेभी उसको भय उत्पन्न होनेकी कोई संभावना नहीं है ॥ २७ ॥

रणे च राजद्वारे च सर्व्वत्र विजयी भवेत् ।
सर्व्वत्र पूजामाप्नोति देवीपुत्र इव क्षितौ ॥२८॥

जो मनुष्य इस स्तोत्रको पाठ व धारण करताहै, वह क्या रणमें, क्या राजद्वारमें, सर्वत्रही विजयलाभ करता है और सर्वत्र सबही उसकी पूजा करते हैं वह देवीके पुत्रकी समान पृथ्वीतलमें परम सुखसे विचरण करता है ॥ २८ ॥

एतत्स्तोत्रं महापुण्यं धर्मकामार्थसिद्धिदम् ।
यत्र तत्र न वक्तव्यं गोपितव्यं प्रयत्नतः ॥२९॥

यह स्तोत्र परम पवित्र है, इसके द्वारा धर्म और कामकी सिद्धि होती है इसको जहां तहां प्रकाश

करना उचित नहीं है, इसको यत्नसहित गुप्त रखना चाहिये ॥ २९ ॥

गोपितं सर्व्वतन्त्रेषु सारात्सारं प्रकीर्तितम् ।
सर्व्वत्र सुलभा विद्या स्तोत्रमेतत्सुदुर्लभम्॥३०॥

और जो कोई विद्याभी क्यों न हो, सर्वत्रही सुलभतासे प्राप्त होजाती हैं, परन्तु यह स्तोत्र अतिदुर्लभ जानना चाहिये। सारकाभी सारभूत यह स्तोत्र संपूर्ण तन्त्रोंमें गोपनीय कहकर कीर्त्तित है ३०॥

शठाय भक्तिहीनाय निन्दकाय महेश्वरि ।
न्यूनांगे अतिरिक्तांगे क्रूरे मिथ्याभिभाषिणे ॥
न स्तवं दर्शयेद्दिव्यं परमं सुरदुर्लभम् ॥३१॥

हे महेश्वरारि ! जो मनुष्य शठ लक्ष्मीकी भक्तिविहीन, जो पराई निन्दा करनेवालाहै और जो मनुष्य विकलाङ्ग अथवा जिसकी देह अतिस्थूल (बड़ी) है, जो मनुष्य क्रूर और झूंठ बोलनेवाला है, उसको कभी यह देवताओंकोभी दुर्लभ, परम पवित्र दिव्यस्तोत्र दान न करना चाहिये ॥ ३१ ॥

यत्र तत्र न वक्तव्यं मया तु परिभाषितम् ।
दत्त्वा तेभ्यो महेशानि नश्यन्ति सिद्धयः क्रमात्

हे महेशानि ! यह मेरा कहाहुआ स्तोत्र जहां तहां नहीं कहना चाहिये । उन पूर्वोक्त अनधिकारियोंको यह स्तोत्र प्रदान करनेसे समस्त सिद्धियें क्रमक्रमसे नष्ट होजाती हैं ॥ ३२ ॥

मन्त्राः पराङ्मुखा यान्ति शापं दत्त्वा सुदारुणम्।
अशुभञ्च भवेत्तस्य तस्माद्यत्नेन गोपयेत् ॥३३॥

जो मनुष्य साधारण मनुष्यके निकट इस स्तवको प्रकाश करताहै, उससे संपूर्ण मंत्र विमुख हो दारुण-शाप देकर पलायन कर जाते हैं और अनेक प्रकारके अशुभ उपस्थित होते हैं, इस कारण यत्नसहित इसको गुप्त रखना चाहिये ॥ ३३ ॥

गोरोचनाकुंकुमेन भूर्ज्जपत्रे महेश्वरि ।
लिखित्वा शुभयोगे च ब्रह्मेन्द्रौ वैधृतौ यथा ॥
सर्व्वार्थसिद्धिमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः३४

हे महेश्वरि ! यदि ब्रह्मा अथवा इन्द्रभी शुभयोगमें भोजपत्रपर गोरोचना और कुंकुमसे लिखकर यह स्तव धारण करै, तौ वहभी सर्वार्थसिद्धि लाभ करते हैं, इसमें संशय नहीं ॥ ३४ ॥

कुमारीं पूजयित्वा तु देवीसूक्तं निवेद्य च ।
पठित्वा भोजयेद्विप्रान्धनवान्वेदपारगान् ३५॥
नाधयो व्याधयस्तस्य दुःखशोकभयं भवेत् ।
वादी मूको भवेद् दृष्ट्वा राजा च सेवकायते३६॥

प्रथम कुमारीकी पूजा करके देवीसूक्तपाठपूर्वक इस स्तवराजका पाठ करे, इसके पीछे वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंको तृप्ति देनेवाला भोजन करावे; इसप्रकार करनेसे जगतमें सबकी अपेक्षा धनवान् होजाता है । जो मनुष्य इसप्रकार विधानानुसार इस स्तवराजका पाठ करता है, उसको आधि, व्याधि, दुःख, शोक, भय, कुछभी आक्रमण व परास्त करनेमें समर्थ नहीं होते हैं, उसके केवल देखनेसेही बोलनेवालेको मूकता प्राप्त होती है और राजाभी दासके समान वशमें होजाता है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

मासमेकं पठेद्यस्तु प्रत्यहं नियतः शुचिः ।
दिवा भवेद्धविष्याशी रात्रौ भक्तिपरायणः ।
तस्य सर्व्वार्थसिद्धिः स्यात्सत्यंसत्यंमहेश्वरि ३७

हे महेश्वरि ! जो मनुष्य दिनमें हविष्यान्न भोजन करके रात्रियोगमें भक्तिपरायण हो विशुद्धाचारसहित एकमहीनेतक इस स्तोत्रका पाठ करता है,उसको निःसंदेह संपूर्ण सिद्धियें मिलती हैं ॥ ३७ ॥

षट्सहस्रप्रमाणेन प्रत्यहं प्रजपेत्सदा ।
षण्मासैर्व्वा त्रिभिर्म्मासैः खेचरोभवति ध्रुवम् ३८

जो मनुष्य प्रतिदिन छः महीनेतक वा तीन महीने तक दररोज छः हजारवार इस स्तोत्रका जप करता है उसको खेचरी सिद्धि मिलती है ॥ ३८ ॥

अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनवान्भवेत् ।
अरोगी बलवांस्तस्य राजा च दासतामियात् ३९

इस स्तवके प्रसादसे अपुत्र मनुष्यको पुत्र और धनहीनको धन मिलता है, इसके प्रभावसेही रोगोंसे

छूटकर अतुलबल, वीर्यलाभ किया जा सकता है, जो मनुष्य विधानानुसार इस स्तवराजको पढता व धारण करता है, उसके निकट राजाभी दासकी समान वशमें होजाता है ॥ ३९ ॥

य एवं कुरुते धीमान्स एव कमलापतिः ।
स एव श्रीमहादेवस्तस्य पत्नी हरिप्रिया ४०॥

जो बुद्धिमान् यथाविधि इस स्तवका पाठादिक करता है, वह हरिके सायुज्यपदको प्राप्त होता है, वही सदाशिवके समान होता है, और उसकी स्त्री कमला (लक्ष्मी) के समान होती है ॥ ४० ॥

बहुना किमिहोक्तेन स्तवस्यास्य प्रसादतः ।
धर्म्मार्थकाममोक्षञ्च लभते नात्र संशयः ॥४१॥

अधिक और क्या कहूं ! इस स्तवके प्रसादसे धर्म' अर्थ, काम, मोक्ष चारों वर्गही प्राप्त होजाते हैं,इसमें संशय नहीं ॥ ४१ ॥

इति ते कथितं देवि त्रैलोक्यमङ्गलाभिधम् ।
लक्ष्मीस्तोत्रं महापुण्यं संसारार्णवतारकम् ४२

हे देवि! मैंने यह तुमसे भवसागरके परित्राण (रक्षा) का कारण महापवित्र त्रैलोक्यमंगलनामक लक्ष्मीस्तोत्र कथन किया॥ ४२ ॥

ऋजवे सुचरित्राय विष्णुभक्तिपराय च।
दातव्यश्च प्रयत्नेन परमं गोपनं त्विदम्॥४३॥

यह स्तोत्र परम गोपनीय (गुप्त रखने योग्य) है. केवल सुचरित्र,सरल और विष्णुकी भक्ति करनेवाले मनुष्यकोही इसका दान करे॥ ४३ ॥

इति श्रीशंकरभाषितं त्रैलोक्यमंगलनामकलक्ष्मीस्तोत्रं कान्यकु-
ब्जवंशावतंसकात्यायनगोत्रोद्भवमिश्रसुखानंदसूनुपंडित-
कन्हैयालालमिश्रमुरादाबादनिवासिकृत–भाषा-
टीकासहितं संपूर्णम्।

व्रजविहारः।

कस्त्वं न्वत्र बलानुजस्त्वमिह किं मन्म-
न्दिराशङ्कया। बुद्धं तन्नवनीतकुम्भविवरे
हस्तं कथं न्यस्यसि॥ कर्त्तुं तत्र पिपीलि-

कापनयनं सुप्ताः किमुद्बोधिताः । बाला वत्सगतिं विवेक्तुमिति संजल्पन्हरिः पातु वः ॥ १ ॥

एक दिन व्रजविहारके समय श्रीकृष्ण किसी गोपीके गृहमें प्रवेश करके मक्खनकी चोरी कर रहे थे। गोपरमणीने देखकर पूछा " तू कौन है रे ? " श्रीकृष्णने उत्तर दिया " मैं बलरामका छोटा भाई हूं " गोपिकाने पूछा " इस स्थानपर किस लिये आया है" श्रीकृष्णने उत्तर दिया "मैं अपना घर जान धोकेसे यहां आगया " गोपिकाने कहा "भला यदि ऐसाहीथा तो मक्खनके घडेमें हाथ क्यों डालतेहो?" श्रीकृष्णने उत्तर दिया कि " इसमें पिपीलिका अर्थात् चीटियें पड़गई हैं सो उनको दूर किये देता हूं" गोपिकाने फिर पूछा " अच्छा ! बालक नींदमें सो रहे थे, उनको क्यों जगायो ? " श्रीकृष्णने उत्तर दिया " यह विचारनेके लिये कि सब बछडे कहाँ चलेगये हैं। " इस प्रकार जिन्होंने व्रजविहारके समय गोपिकाओंसे आनंद किया है. वही कृष्ण तुम्हारी रक्षा करैं ॥ १ ॥

जीर्णा तरिः सरिदतीव गभीरनीरा
बाला वयं सकलमित्थमनर्थहेतुः ।
निस्तारबीजमिदमेव कृशोदरीणां
यन्माधव त्वमसि सम्प्रति कर्णधारः ॥ २ ॥

किसी दिन श्रीकृष्ण कर्णधार (खेवइये) होकर गोपियोंको नदीपार करतेथे, उस समय गोपिकायें नदीको गंभीर देखकर कहने लगीं कि, यह नौका अत्यन्त जीर्ण (पुरानी) है, नदी गहरे जलसे परिपूर्ण है, और हम सब बालिका हैं, इस कारण जो कुछ देखती हैं सबही अनर्थका हेतु है, किन्तु हे कृष्ण! हम क्षीणाङ्गियोंका एक यही निस्तार होनेका कारण दीखता है, कि जो तुम इस समय कर्णधार होकर हमें पार करो ॥ २ ॥

श्रीश्रीकृष्णोजयति जगतां जन्मदाता च पाता
हर्त्ता चान्ते हरति भजतां यश्च संसारभीतिम् ।
राधानाथः सजलजलदश्यामलः पीतवासा
वृन्दारण्ये विहरति सदा सच्चिदानन्दरूपः॥३॥

तीनों जगत्‌की सृष्टि, स्थिति और संहारके कारण, भक्तजनोंके संसारी भयको नाश करनेवाले, काले वादलकी समान साँवरे, पीतवस्त्रधारे श्रीकृष्ण सर्वदा वृन्दावनके वनोंमें विहार करते हैं, वास्तवमें वह सच्चिदानंदस्वरूप हैं ॥ ३ ॥

ज्योतीरूपं परमपुरुषं निर्गुणं नित्यमेकं
नित्यानन्दं निखिलजगतामीश्वरं विश्वबीजम् ।
गोलोकेशं द्विभुजमुरलीधारिणं राधिकेशं
वन्दे वृन्दारकविधिहरव्रातवन्द्यांघ्रिपद्मम् ॥४॥

जो ज्योतिःस्वरूप हैं, गुणोंसे परे तथा नित्यानंदस्वरूप हैं, जो केवल परमपुरुष, निर्गुण अविनाशी और भुवनोंके अधीश्वर हैं, क्या ब्रह्मा, क्या शिव सबही जिसके चरणोंकी वन्दना करते हैं, वही नारायण द्विभुज मुरलीधारण करनेवाले राधिकानाथ रूपसे वृन्दावनमें वास करते हैं, मैं उन्हीं गोलोकपतिके चरणकमलोंमें प्रणाम करता हूं ॥ ४ ॥

येषां श्रीमद्यशोदासुतपदकमले नास्ति भक्ति-र्नराणां येषामाभीरकन्याप्रियगुणकथने नानुरक्ता रसज्ञा॥ येषां श्रीकृष्णलीलाललितगुणकथासादरौ नैव कर्णौ धिक्तान्धिक्तान्धिगेतान्कथयति नितरां कीर्त्तनस्थो मृदङ्गः ५

हरि संकीर्त्तनके समय मृदंग जो "धिक्तान् धिक्तान्, धिक्तान्" प्रभृति ध्वनि करता है, उसका तात्पर्य यह है। वह मृदंग यह कहकर खेद प्रकाश करता है कि श्रीकृष्णके चरणकमलमें जिनकी भक्ति नहीं है, जिनकी जिह्वा गोपरमणीगणोंके प्रियपात्र हरिके गुण कीर्त्तन करनेमें अनुरागी नहीं है, श्रीकृष्णकी लीला सुननेको जिनके दोनों श्रवण (कान) उत्साह प्रकाश नहीं करते हैं, उनको धिक्कार है, धिक्कार है, धिक्कार है॥ ५॥

वृन्दावने वृक्षलताप्रतानैर्वृन्दावनेशस्य विहारहेतोः। पुरा विधात्रा रचितान्सुकुञ्जाञ्जगाम कृष्णः सह राधया सः॥ ६॥

वृन्दावनपति श्रीकृष्णके विहार करनेको स्वयं विधाताने अनेक प्रकारके वृक्षलतासे मनोरम कुंज बनाये हैं, उन्हीं सब कुंजवनोंमें श्रीकृष्ण राधासहित भ्रमण करते हैं ॥ ६ ॥

नवीनमेघोपमनीलदेहः सुपीतपट्टाम्बरयुग्मधारी । स्मिताननः कुण्डलवान्किरीटी वंशीधरो मालतिमाल्यधारी ॥ ७ ॥

श्रीकृष्णकी देह नये बादलकी समान श्याम है, शोभायमान पीलेवर्णकी रेशमीन वस्त्र पहेरहुए हैं, उनका वदन मन्द मुसकानसे विराजमान है, उनके कानोंमें सुन्दर कुण्डल शोभायमान हैं, मस्तकपर किरीट हाथमें बांसुरी और गलेमें मालतीकी माला पडी है ऐसे भगवान् शोभायमान होते हैं ॥ ७ ॥

गोपीजनानन्दकरो मुरारिर्वृन्दावनेन्द्रो वनमाल्यशोभी । वंशीनिनादेन व्रजांगनानां मनांसि सम्मोहितवान्स कामी ॥ ८ ॥

गोपीजनोंको आनन्द देनेवाले, वनमाला धारण करनेवाले, वृन्दावनपति, कृष्ण विहारकी वासनासे बंसीकी ध्वनि कर ब्रजरमणीगणोंका मन मोहलिया करते हैं ॥ ८ ॥

गोपीजना यमिह कामदृशा भजन्ते
यं भक्तिभाज इह केवलभक्तिभावैः ॥
यं योगिनो हृदि धिया परिचिन्तयन्ति
तं केवलं कमललोचनमाश्रयेऽहम् ॥ ९ ॥

गोपिकागण कामदृष्टिसे जिसका भजन करती हैं, भक्त मनुष्यगण भक्तिभावसे जिसकी आराधना करते हैं, योगीजन योगबलसे जिसको चित्तमें दर्शन करते हैं मैंने उन्हीं कमललोचन कृष्णको आश्रय किया ॥ ९ ॥

वनेवने कुञ्जवने मुरारिः परिभ्रमन्भ्राजति
राधिका च । सहैव कुञ्जे रमते च राधया
पायादपायादिह कृष्ण एकः ॥ १० ॥

जो वनवनके कुंजकुंजमें श्रीराधाके संग भ्रमण और विहार करते हैं, केवल वही कृष्ण संपूर्ण अपायोंसे हमारी रक्षा करें ॥ १० ॥

वृन्दारण्ये विहरति सदा वासुदेवो दयालु-
र्गोपस्त्रीभिः स्मरशतशरैर्भिन्नहृत्कामुकाभिः ॥
गोपैर्बालैरपि सहचरैः सार्द्धमानन्दयुक्ते-र्योसौ
कृष्णः परमकरुणस्तं सदा चिन्तयेऽहम्॥ ११॥

जो कामसे आतुर हुई गोपरमणियोंके संग वृन्दावनमें विहार करते हैं कामबाणसे जिनका हृदय फटता है, जो गोपबालकोंके संग क्रीडा करते हैं मैं उन्हीं करुणामय कृष्णका सदा ध्यान करता हूं ११॥

इति श्रीसौभाग्यलक्ष्मीः मुरादाबादनिवासि-कात्यायनगोत्रोद्भव-पंडितकन्हैयालालमिश्रकृतभाषाटीकासहिता समाप्ता ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

क्रय्यपुस्तकें (व्रतकथा–ग्रन्थाः)

नाम	की॰ रु॰ आ॰
अनन्तकथा–मूलमात्र ...	०–२
अनन्तकथा–भाषाटीकासहित याने भादोंशुक्ल १४ के व्रतका विधान...	०–३
अन्नपूर्णाकथा–मूल–भविष्यपुराणान्तर्गत–इसका पाठ करनेसे निरंतर घरमें धनधान्यका संग्रह रहता है	०–१॥
आदित्यव्रतकथा–भाषाटीकासहित	०–१॥
ऋषिपञ्चमी–भाषाटीकासहित । यह व्रत भादों शुक्ल पंचमीका है । स्त्रियोंको अवश्य करना उचित है । इससे पंचमहापातकोंसे मुक्ति होती है ...	०–२

नाम कीं० रु० आ०

विद्यारत्न पं० जगदीश प्रसादजी मिश्र द्वारा संशोधित। इस पुस्तकमें चौबीसों गायत्रियां हैं जिसमें ब्रह्म-गायत्री भी सम्मिलित है, इस ब्रह्म-तेजमयी गायत्रीके महत्त्वपूर्ण अर्थको समझ कर जप करनेवाले पुरुष सच-मुच विविध कष्टोंको वीरता पूर्वक निवारण कर सकते हैं। ... ०–४

कामरत्न–योगेश्वर नित्यनाथ प्रणीत और विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र कृत भाषाटीका सहित। इसमें मोहन–वशीकरण, इत्यादिके अति-रिक्त वैद्यकके भी वाजीकरण आदि उत्तम प्रयोग हैं। ... २–४

नाम	की० रु० आ०
तन्त्रसार—स्वामी कृष्णानन्दजी भट्टाचार्य द्वारा अनेक तन्त्रोंसे संगृहीत और विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादजी मिश्र कृत सिद्धिप्रदायक भाषानुवाद सहित। इसमें अवश्य सिद्धिप्रद सभी संप्रदायोंका उपासना कांड है। यह आरंभका एक अंश है शेष छप रहा है।	०—८
आश्चर्ययोग मालातन्त्र—सिद्धनागार्जुन प्रणीत, और तन्त्रोंके आदि अनुवादक भारतरत्न पं० बलदेवप्रसादजी मिश्र कृत भाषाटीका सहित। इसमें अनेक प्रकारके योगानुकूल षट् कर्म और गर्भ इत्यादिकका औषधि प्रयोग है	०—४
गुप्तसाधन तन्त्र—शिवप्रणीत—तथा पं०	

नाम	की० रु० आ०
बलदेवप्रसादजी मिश्रकृत भाषाटीका सहित। यहग्रन्थ परमोत्तम है	०-६
यन्त्रचिन्तामणि-पं० बलदेवप्रसादजी मिश्र कृत भाषाटीका सहित और मिश्रके भ्रातृव्य विद्यारत्न पं० जगदीशप्रसादजी मिश्र द्वारा संशोधित इसमें वशीकरण, आकर्षण, स्तम्भनादि षट्प्रयोग शान्ति पौष्टिकादि तथा गर्भ बालरक्षाकारक यन्त्रोंका विशेष रूपसे वर्णन है ।	०-१२
अष्टसिद्धि-अनेक ग्रन्थोंके टीकाकार व रचयिता पं० कन्हैयालालजी मिश्र कृत भाषाटीका सहित । गुरूपदिष्ट मार्गसे अभीष्टफलदायक अपूर्व ग्रन्थ है जो कि अवश्य संग्रह करने योग्य है ।	०-१२